योगविद्या

वर्ष 13 अंक 5
मई 2024

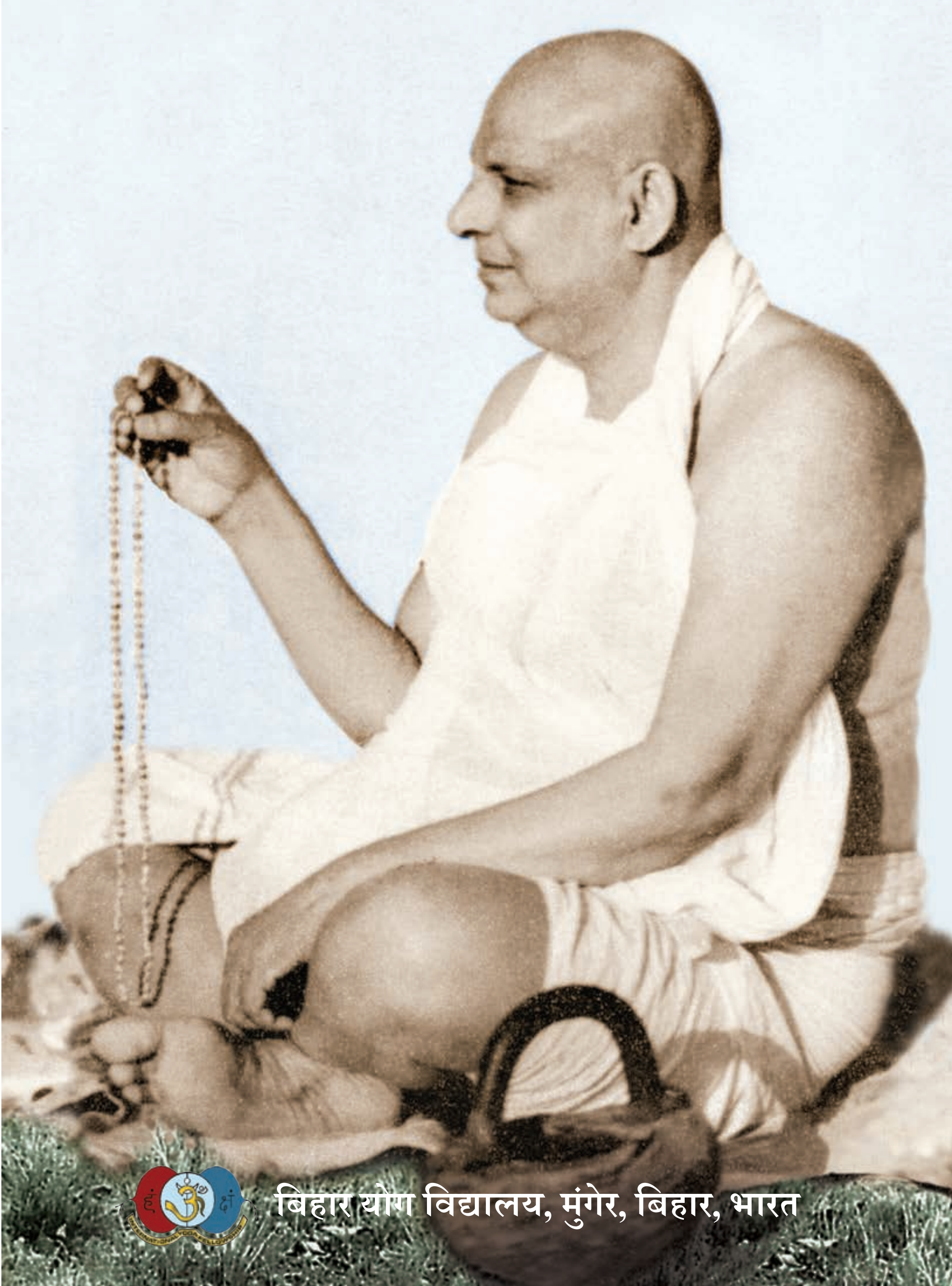

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरिः ॐ

योगविद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2024

उपयोगी संसाधन

वेबसाइट :

www.biharyoga.net
www.sannyasapeeth.net
www.satyamyogaprasad.net

एप्प : (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)
Bihar Yoga
APMB
YOGA (अंग्रेजी पत्रिका)
YOGAVIDYA (हिन्दी पत्रिका)
FFH (For Frontline Heroes)

कुल पृष्ठ संख्या : 56 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर एवं अन्दर के प्लेट:
श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

जीवन में परीक्षाओं और कठिनाइयों के आ जाने पर हतोत्साहित मत होना। ईश्वर महान् है, लेकिन उसकी लीला समझना सरल नहीं है। हम अपने दैनिक जीवन के क्रिया-कलापों में ईश्वर को अक्सर भुला देते हैं। ऐसे समय पर दुःख-कष्ट हमें आ घेरते हैं। इनका प्रयोजन यही रहता है कि हमारा अहंकार दूर हो। वास्तव में देखा जाए तो ये सारे दुःख-कष्ट गुप्त रूप से वरदान ही हैं। ये हमें शुद्ध बनाने हेतु भगवत्प्रसाद हैं। हमें जो-जो विपत्तियाँ आ घेरती हैं, उनके पीछे कोई-न-कोई महान् प्रयोजन रहता है। याद रखो – विपत्तियों की भट्टी में तपे बिना जीवन खरा सोना नहीं बनता।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद–121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

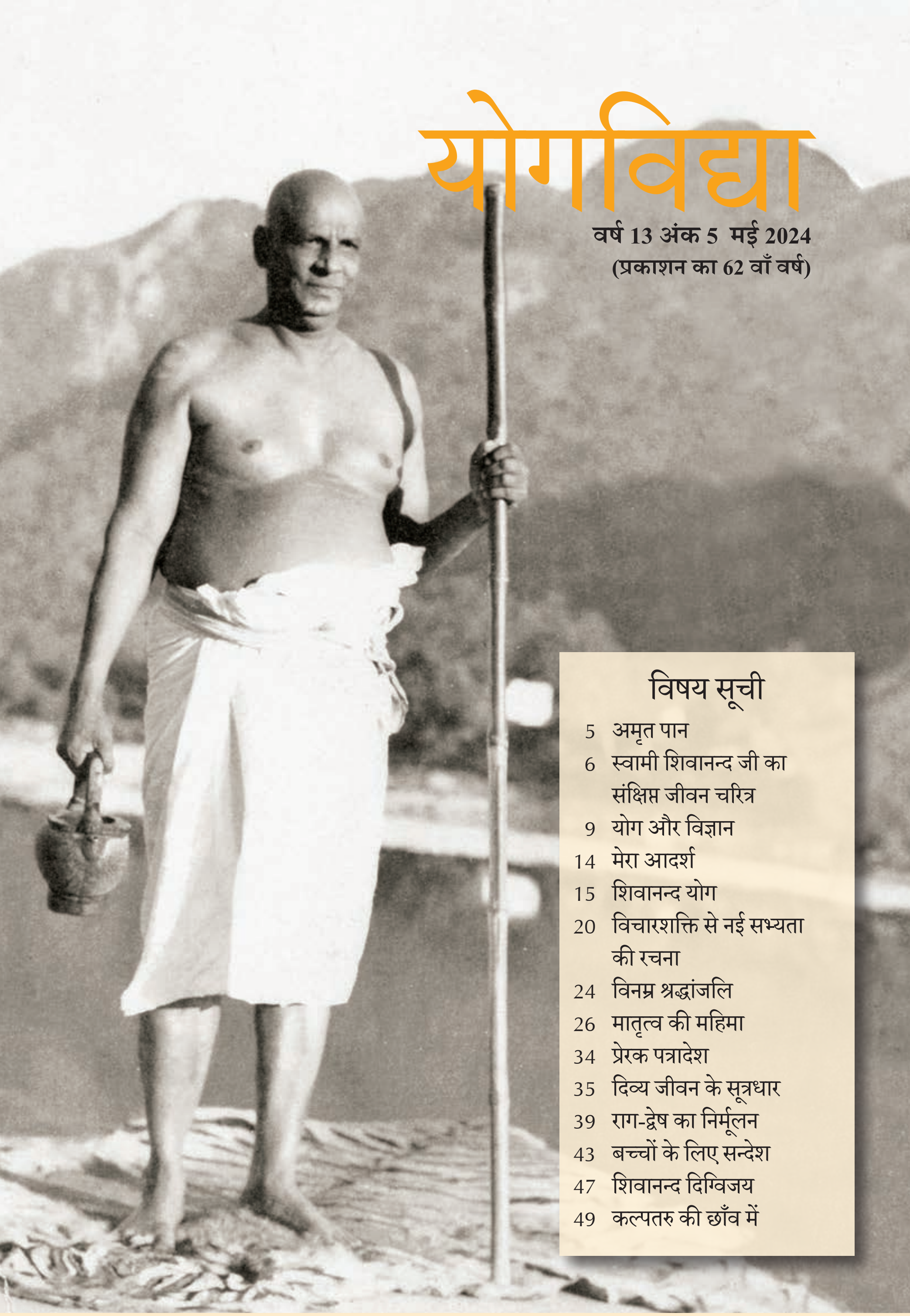

योगविद्या

वर्ष 13 अंक 5 मई 2024
(प्रकाशन का 62 वाँ वर्ष)

विषय सूची

5 अमृत पान
6 स्वामी शिवानन्द जी का संक्षिप्त जीवन चरित्र
9 योग और विज्ञान
14 मेरा आदर्श
15 शिवानन्द योग
20 विचारशक्ति से नई सभ्यता की रचना
24 विनम्र श्रद्धांजलि
26 मातृत्व की महिमा
34 प्रेरक पत्रादेश
35 दिव्य जीवन के सूत्रधार
39 राग-द्वेष का निर्मूलन
43 बच्चों के लिए सन्देश
47 शिवानन्द दिग्विजय
49 कल्पतरु की छाँव में

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

योगविद्या पत्रिका का यह विशेषांक परमगुरु, श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती और उनकी संन्यास जयन्ती को समर्पित है। 1 जून 1924 को वे अपने गुरु, श्री स्वामी विश्वानन्द सरस्वती द्वारा दशनामी संन्यास की पावन परम्परा में दीक्षित हुए थे। माँ गंगा के समीप एक वृक्ष के नीचे गुरु और शिष्य के बीच यह ऐतिहासिक भेंट हुई जिसमें डॉ. कुप्पुस्वामी बन गये स्वामी शिवानन्द सरस्वती और उसी शुभ घड़ी में हमारी परम्परा की नींव पड़ी। समर्थ गुरु की प्रेरणा एवं आदर्श शिष्य की शरणागति आज भी असंख्य साधकों का पथ प्रकाशित कर रही है, उनके हृदय को श्रद्धा, भक्ति, साहस और विश्वास से भर रही है।

2023 *सेवा वर्ष* था, जो श्री स्वामी सत्यानन्द जी की जन्म शताब्दी को समर्पित था, और अब 2024 में श्री स्वामी शिवानन्द जी की संन्यास शताब्दी से *सत्संबंध वर्ष* का श्रीगणेश हो रहा है जिसमें सभी साधकों और शिष्यों को एक मजबूत संबंध जोड़ने के लिए प्रेरित किया जा रहा है – अच्छाई और सकारात्मकता के साथ, अपने परिवार और समाज के साथ, अपनी गुरु-परम्परा के साथ तथा सर्वव्यापी दिव्यता के साथ।

अमृत पान

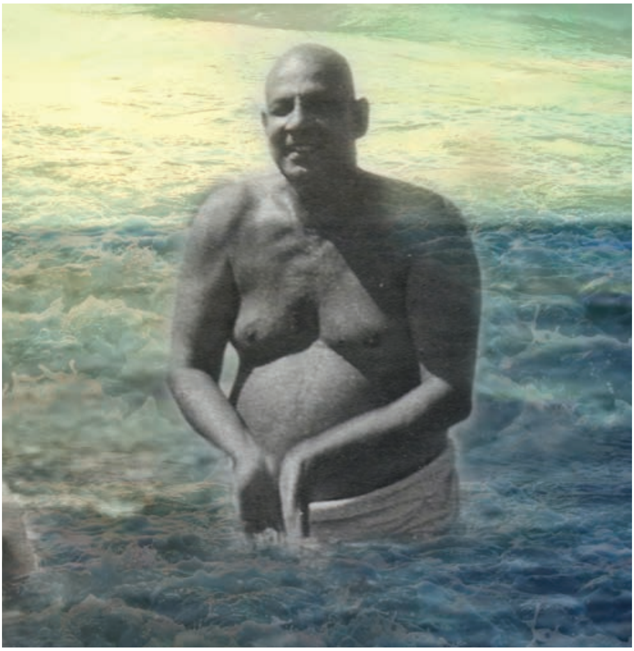

अन्तर पथ से मेरे जागे गीत –
'जागो हे शिव! जग में सत्वर,
अपने इस खप्पर को भर लो,
अमृत से तुम!
पुनः दे दो सबको,
पीने दो सबको,
दूँगा मैं बल, ओज, शक्ति और ज्ञान महान्।'
जाग उठा मैं निज पथ पर उद्यत,
खप्पर सचमुच भरता गया अमृत से –
और मैंने भी तो सबको –
कोटिशः तृषाकुल-मनुजों को
सानन्द पीने दिया।

– स्वामी शिवानन्द सरस्वती

भूमण्डलेश्वर श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती का संक्षिप्त जीवन चरित्र

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

पूर्व नाम – डॉ. पी.वी. कुप्पुस्वामी अय्यर। जन्म 8 सितम्बर, 1887 को पट्टामडाई (टिन्नीवेली, दक्षिण भारत) में हुआ। विद्यार्थी जीवन आदर्शमय रहा। आपने मलाया जाकर 10 वर्ष डॉक्टर के रूप में दीन रोगियों की सेवा की। 1 जून 1924 को ऋषिकेश में शंकर-परम्परागत दशनाम संन्यास की दीक्षा ली।

1930 तक ऋषिकेश में सेवा, आत्मसाधना और कठोर तपस्या की। कठोर तपोलीन स्वामी जी ने क्रन्दन की उपेक्षा नहीं की। किसी महात्मा को दवा ला दी, किसी के लिए भिक्षा, तो किसी के वस्त्र धो दिए और किसी के पांव दबाये। लोकोत्तर होकर भी लोक-संग्रह आपकी विशेषता है। आपकी साधना जीवन-साधना नहीं, बल्कि आपका जीवन ही साधना है। 1935 में ज्ञानोदय हुआ, परिव्राजक बन, हिमालय से कन्याकुमारी तक भागवत-धर्मप्रचारार्थ यात्रा की।

16 अप्रैल, 1936 को वैदिक संस्कृति के पुनरुदय तथा आध्यात्मिक विद्या के व्यापक प्रचार के लिये 'दिव्य जीवन मंडल' की स्थापना की। आपने रोगग्रस्त, अशिक्षित पर्वतीयों के लिये धर्मार्थ चिकित्सा तथा विद्यादान का प्रबन्ध भी किया है। आध्यात्मिक विद्या-प्रसार के लिए 23 अप्रैल 1938 को शिवानन्द प्रकाशन मंडल की स्थापना कर पवित्र ग्रन्थों का प्रकाशनारंभ किया और पश्चिम में योग-वेदान्त शिक्षण केन्द्रों की स्थापना की। 8 सितम्बर,

1938 को दिव्य जीवन (मासिक) का अंग्रेजी संस्करण निकाला, जो भारत की सभी भाषाओं में प्रकाशित होता है। 3 दिसम्बर, 1943 को श्री विश्वनाथ मंदिर की प्राण-प्रतिष्ठा की और अतिरुद्रादि पवित्र यज्ञों का पुनरारंभ किया। सन् 1945 में रोग-निदान तथा शुद्ध भारतीय औषधियों के निर्माण के लिये आयुर्वैदिक औषध निर्माणशाला का उद्घाटन किया। सन् 1945 में सर्व-धर्म सम्मेलन और 1947 में सार्वदेशिक साधु मंडल की प्रथम बैठक का आयोजन किया। 1 जनवरी, 1949 को योग-विद्या-प्रचारार्थ ज्ञानज्योति (मासिक) का प्रकाशन आरम्भ किया। वेदान्त-तत्त्वोपदेश के लिये 3 जुलाई, 1948 को योग-वेदान्त आरण्य विश्वविद्यालय साप्ताहिक का श्रीगणेश हुआ। 9 सितम्बर, 1950 से 8 नवम्बर तक हिमालय से लेकर लंका तक समस्त भारत में इनकी दूसरी दिग्विजय यात्रा हुई। भारत के सभी प्रान्तों में धर्म-विद्या का प्रचार तथा आध्यात्मिक जीवन-संदेश और आदर्श-जीवन का उपदेश दिया।

आपने अब तक संस्कृति, लोकधर्म, योग, दर्शन तथा स्वास्थ्य इत्यादि विषयों पर 200 से अधिक ग्रन्थ रचे हैं। गीता, उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र, राजयोग-भाष्य तो विश्व को आपकी देन हैं ही, साथ ही आपके अन्य ग्रन्थ हैं, जिनकी स्पष्टता और जीवन-स्फूर्तिमत्ता विश्व के किसी भी दर्शन-साहित्य में नहीं। भारतेतर अमेरिका, इंग्लैण्ड, जर्मनी, लैटविया, अफ्रीका, चीन, बर्मा, डेन्मार्क, फ्रांस, ईरान, ऑस्ट्रेलिया और स्वीडन में आपके मण्डल की शाखाएँ हैं, जो ईश्वर, मनुष्य और धर्म की विराट् एकरूपता का ज्ञान जन-जन की अनुभूतियों में ओतप्रोत कर रही हैं। भारत में उनकी संख्या 300 है।

पाश्चात्य जगत् के समक्ष आपने भारतीय संस्कृति का वह आदर्श रूप प्रकाशित किया है, जो आज की अनुकूल आवश्यकता है। भारत को पहले निरा-परम्परावादी और अन्धविश्वासी कहा जाता था, आज समस्त विश्व आदर्श-जीवन और उस जीवन की विचारधारा के निश्चित रूप को जानने के लिए तथा अपने हाथों रची गई राग-द्वेषादि की समस्या की सिद्धि के लिए भारत की ओर देख रहा है। आपने अपने साहित्य द्वारा यह सिद्ध किया है कि भारत निरा-परम्परावादी, मूर्ति-पूजक, रूढ़िग्रस्त असभ्यों और जादूगरों का देश नहीं, अपितु आदर्श सभ्यता एवं व्यावहारिक दर्शन और सत्य परम्परा का प्रथम उदयाचल है। आपका दर्शन सभी विचार-धाराओं का समन्वय है, यह पूर्णयोग है। ॥ ॐ शिवानन्दाय नमः ॥

– योग-वेदान्त के मार्च 1956 अंक से साभार उद्धृत

योग और विज्ञान

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

कुछ लोगों का विश्वास है कि विज्ञान ही इस संसार की पहेली को सुलझा सकता है। वे ऐसा मानते हैं कि वैज्ञानिक पद्धति ही सत्य को जानने की एकमात्र विधि है और वैज्ञानिक प्रशिक्षण और अनुशासन द्वारा ही चरित्र का निर्माण किया जा सकता है। इन लोगों ने नैतिक शिक्षा और धर्म का पूरी तरह से तिरस्कार कर दिया है।

एक बार एक वैज्ञानिक मेरे पास आए और कहने लगे, 'उपनिषदों और ब्रह्मसूत्रों को वैज्ञानिक तरीके से नहीं लिखा गया है। मैं इस विषय को वैज्ञानिक दिशा देने की कोशिश कर रहा हूँ।' मैंने हँसते हुए कहा, 'मेरे प्रिय वैज्ञानिक मित्र! उपनिषद् श्रुति है, ब्रह्मविद्या अन्तर्ज्ञान है। तुम अपने वैज्ञानिक उपकरणों को वहाँ नहीं ले जा सकते। एक वैज्ञानिक के अन्वेषण और प्रयोग एक-तरफा होते हैं, क्योंकि वे जाग्रत अवस्था से ही सम्बन्धित होते हैं। इस अवस्था के सभी अनुभव सापेक्ष होते हैं, उन्हें अंतिम नहीं माना जा सकता।'

विज्ञान की सीमा

तीन अन्धों ने एक हाथी के विभिन्न अंगों को छूआ। एक ने पैर को छूकर कहा, 'हाथी एक स्तम्भ के समान है', दूसरे ने कान छूकर कहा, 'हाथी एक पंखे के समान है', तीसरे ने उसके पेट को छूकर कहा, 'हाथी तो मटके के समान है।' जब वैज्ञानिक भौतिक जगत् का अध्ययन करते हैं और अणु, ऊर्जा आदि भौतिक पदार्थों के नियामक सिद्धान्तों को खोजते हैं, तब वे इन अन्धे व्यक्तियों की तरह ही प्रतीत होते हैं। उन्हें केवल एक ही पक्ष का ज्ञान होता है। उन्होंने स्वप्न और गहन निद्रा की सूक्ष्म अवस्थाओं पर ध्यान नहीं दिया है। इसलिए उन्हें विस्तृत और गहन ज्ञान नहीं है।

आधुनिक विज्ञान ने जीवन को आरामदेह बना दिया है। लोग भौतिकवाद के समर्थक होते जा रहे हैं। परन्तु समय-समय पर ऐसी घटनाएँ होती रही हैं जिन्होंने यह सिद्ध कर दिया है कि आप विज्ञान पर पूरी तरह निर्भर नहीं रह सकते हैं। मनुष्य प्रकृति के संसाधनों का अत्यधिक उपयोग कर रहा है, फिर भी न तो वह खुश है और न ही रहने के लिए संसार को एक बेहतर जगह बना पाया है।

कहाँ है संतुष्टि, प्रसन्नता और शान्ति? क्या वैज्ञानिक आविष्कार वास्तव में हमें प्रसन्नता देते हैं? विज्ञान ने हमारे लिए आखिर क्या किया है? विज्ञान ने देश-काल की सीमाओं को भले ही संकुचित कर दिया हो, आज यह पृथ्वी भले ही बहुत छोटी हो गई हो, परन्तु क्या विज्ञान ने सही मायने में मनुष्य की प्रसन्नता को बढ़ाया है? इसका उत्तर सकारात्मक तो नहीं ही है। विज्ञान ने मनुष्य की जरूरतों और भोग-विलासिता को अत्यधिक बढ़ा दिया है। वैज्ञानिक आविष्कारों से जीवन और भी जटिल हो गया है, मन और अधिक चंचल बन गया है। बीसवीं शताब्दी में विज्ञान ने बहुत उन्नति कर ली है, परन्तु उसने मानव की नैतिकता में सुधार नहीं किया है। बेरोजगारी, गरीबी, युद्ध, भुखमरी, साम्प्रदायिकता – ये आज भी समाप्त नहीं हुए हैं।

विज्ञान सृष्टि और सृष्टिकर्ता की पहेली को आज तक सुलझा नहीं पाया है। इस जीवन का क्या उद्देश्य है, इसे अभी तक समझ नहीं पाया है। वैज्ञानिक बाहरी जगत् के अध्ययन में ही मग्न हैं, आन्तरिक जगत् को भूल गए हैं। विज्ञान आज भी इन रहस्यमय प्रश्नों का हल नहीं ढूँढ पाया है – इस संसार का मूल तत्त्व क्या है? मैं कौन हूँ? परम सत्य क्या है?

विज्ञान के पास वे उपकरण नहीं हैं जिनसे वह सूक्ष्म आध्यात्मिक तथ्यों की माप कर सके। मनुष्य तीन अवस्थाओं में अनुभव करता है – जाग्रत, स्वप्न और गहन निद्रा। वेदान्ती इन तीनों अवस्थाओं का अध्ययन करता है। इसलिए उसका ज्ञान विस्तृत होता है और वह गहन निद्रा के बाद की चतुर्थ अवस्था, तुरीयावस्था को भी समझ सकता है।

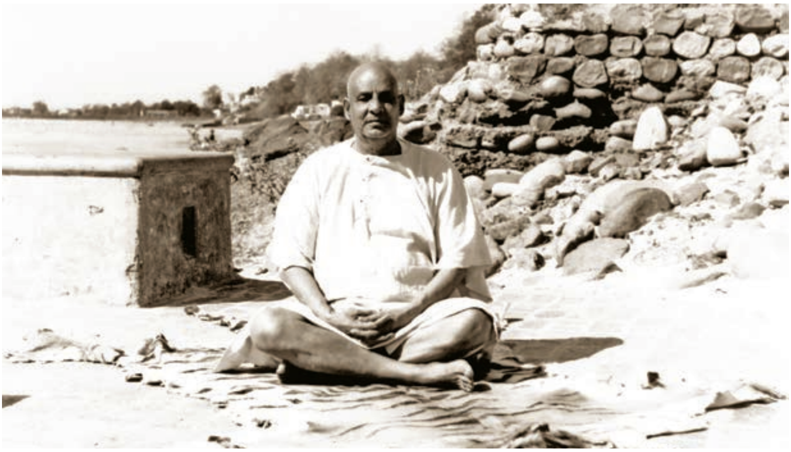

आध्यात्मिकता और भौतिकता

आत्मा भौतिक विज्ञान के परे है। मनुष्य वस्तुतः आत्मा है जो एक शरीर धारण किए हुए है। यह आत्मा मन, आकाश और ऊर्जा से भी सूक्ष्म है। विज्ञान भौतिक जगत् की घटनाओं को समझाता है, परन्तु ब्रह्मविद्या हमें इस जगत् के परे आत्मा के क्षेत्र में जाना सिखाती है। विज्ञान तथ्यों पर विचार करता है, जबकि अध्यात्म नैतिकता पर। ये दोनों मार्ग आपस में एक-दूसरे के पूरक हैं, विरोधी नहीं। इन दोनों को मिलकर सत्य की खोज करनी चाहिए।

विज्ञान के तथ्यों और निराकरणों को समझने से मनुष्य ईश्वर के करीब आता है। इलेक्ट्रॉन में शक्ति कहाँ से आई? वह कौन-सी शक्ति है जिसने नाइट्रोजन और ऑक्सीजन के अणुओं को जोड़कर रखा है? प्रकृति के नियम किसने बनाए हैं? प्रकृति तो जड़ है, फिर वह कौन है जो प्रकृति को चला रहा है? केवल भौतिक नियमों का अध्ययन करने से मनुष्य सम्पूर्ण नहीं हो सकता।

सभी सांसारिक विज्ञानों का मूल ब्रह्मविद्या या आध्यात्मिकता है। ब्रह्मविद्या सभी प्रकार के विज्ञानों में अग्रणी है क्योंकि इससे मनुष्य को अमरता प्राप्त होती है। सांसारिक अनुभव आंशिक होते हैं, जबकि आध्यात्मिक अनुभव सम्पूर्ण। अगर आपको ब्रह्मविद्या का ज्ञान हो जाए तो आपको सभी प्रकार के भौतिक विज्ञानों की जानकारी अपने आप हो जाएगी। लेकिन आप इस विद्या को किसी विश्वविद्यालय में नहीं प्राप्त कर सकते। आपको अपनी इन्द्रियों और मन को वश में करके किसी गुरु से इसे सीखना होगा।

भौतिकता की पूरी तरह उपेक्षा तो नहीं की जा सकती है, परन्तु भौतिकता को अध्यात्म के अधीन होना चाहिए। अगर आप अपना सारा जीवन केवल प्रयोगशाला में ही बिता देते हैं, तो आप आत्मा का आनन्द नहीं उठा पाएँगे। विज्ञान आपको मुक्ति नहीं दे सकता। मन और बुद्धि सीमित उपकरण हैं, इनसे सत्य की अनुभूति नहीं की जा सकती। विभिन्न अवस्थाओं से गुजरकर जब बुद्धि पवित्र हो जाती है तब जाकर आत्मा की अनुभूति होती है।

योग और विज्ञान

योग और विज्ञान परस्पर सम्बन्धित हैं। योगी मानसिक शक्तियों को नियंत्रित करने का प्रयास करते हैं जबकि वैज्ञानिक भौतिक ऊर्जाओं को। वैज्ञानिक एक दृष्टिकोण से अद्वैतवादी ही हैं। उनका भी यही मानना है कि वास्तव में एक ही मूल तत्त्व है – प्रकृति या ऊर्जा। वैज्ञानिक जाने-अनजाने राजयोगी

ही हैं, अन्तर केवल इतना है कि उनकी बुद्धि और एकाग्रता बाह्य जगत् पर ही केन्द्रित रहती है। लेकिन विज्ञान सम्पूर्ण ज्ञान नहीं है। वैज्ञानिक प्रकृति के नियमों का अध्ययन करते हैं, प्रयोगशाला में प्रयोग करते हैं और उनके परिणामों से सटीक निष्कर्ष निकालते हैं। वे प्राकृतिक नियमों को भली-भाँति समझ भी लें, परन्तु उन्हें प्रकृति की उत्पत्ति और स्रोत के विषय में कुछ नहीं मालूम। किसने यह सूर्य बनाया और किसने उसकी किरणों को ऊर्जा दी? किसने अणुओं को ऊर्जा प्रदान की? विज्ञान को इन महान् रहस्यों के बारे में कुछ नहीं मालूम।

इसके विपरीत, योग पूर्ण ज्ञान है। योगी को दिव्य आन्तरिक अनुभूति प्राप्त होती है। वह अपनी प्रज्ञा-दृष्टि से पदार्थ और प्रकृति की सूक्ष्म जानकारी प्राप्त कर लेता है। वह प्रकृति के स्वामी, ईश्वर से सायुज्य अनुभव करता है। उसका पंच-तत्त्वों पर नियन्त्रण होता है। वह इस संसार का रहस्य अन्तर्ज्ञान से समझ लेता है।

वैज्ञानिक को इस प्रकार का सूक्ष्म ज्ञान उपलब्ध नहीं होता। उसके पास केवल प्रयोगात्मक ज्ञान होता है। इन्द्रिय ज्ञान, जिस पर विज्ञान मूलतः आधारित है, की प्रामाणिकता संदिग्ध है। इसलिए उसे सावधानी से प्रयुक्त करना चाहिए। इन्द्रियों के अन्तर्मुखी होने पर ही आन्तरिक ज्ञान का उदय होने लगता है और यह ज्ञान हर दृष्टिकोण से अधिक व्यापक, गहन एवं विश्वसनीय होता है।

वैज्ञानिकों को प्राच्य दार्शनिकों और योगियों से बहुत कुछ सीखना होगा। वह कौन-सी शक्ति है जो अणु और परमाणु बनाती है? कोशिकाओं को किसने ऊर्जा और चेतना दी ताकि वे रक्त से दूध या पाचक अम्ल बना सकें? चित्त का निर्देशक कौन है? विचार के उद्गम का क्या कारण है? वैज्ञानिक अभी भी निरीक्षण और प्रयोग कर रहे हैं। वे अभी भी अंधकार में हैं।

आजकल हमारे देश का शिक्षित वर्ग वैज्ञानिक खोजों से अक्सर गुमराह हो जाता है। किसी भी तथ्य को, चाहे वह कितना भी संदिग्ध क्यों न हो, विज्ञान की मोहर लगने के बाद सत्य मान लिया जाता है। यह आजकल का फैशन है। आधुनिक लोग प्राचीन ऋषि-मुनियों की शिक्षा को अंधविश्वास मानकर अस्वीकार कर देते हैं। इस प्रवृत्ति को बदलना नितान्त आवश्यक है।

मेरा उद्देश्य विज्ञान की अद्भुत खोजों और आविष्कारों की निन्दा करना नहीं है। निश्चित रूप से इन आविष्कारों का आज की पीढ़ी के भौतिक सुख-

आराम में बहुत बड़ा योगदान है। रेडियो, मोटर कार, हवाई जहाज, माइक्रोफोन और अन्य अद्भुत आविष्कार आश्चर्यचकित कर देते हैं। आजकल वैज्ञानिक रेडियो को एक माचिस की तीली के आकार का बनाने का प्रयास कर रहे हैं। वे कोशिश कर रहे हैं कि सड़कें चलायमान हो जाएँ ताकि मोटरकारों और रेलगाड़ियों की जरूरत ही न पड़े। वे मंगल ग्रह से सम्पर्क स्थापित करने के लिए साधन तैयार कर रहे हैं।

शायद वैज्ञानिक अपने इन सभी प्रयत्नों में सफल भी हो जाएँ। परन्तु सवाल यह उठता है कि क्या ये सुविधाएँ और आविष्कार मनुष्य को नित्य संतुष्टि और शान्ति प्रदान करेंगे? क्या मानव आज पहले की तुलना में अधिक अशान्त नहीं है? क्या वह इन सुख-सुविधाओं के बावजूद और अधिक असंतुष्ट नहीं है? इन दोषों का केवल एक समाधान है। अगर आपको शाश्वत आनन्द और शान्ति चाहिए तो इन सुख-सुविधाओं को छोड़कर सरल जीवन अपनाना होगा। सरल, योगमय जीवन से ही शाश्वत आनन्द और अमरता प्राप्त की जा सकती है।

वह जो इन अति सूक्ष्म अणुओं और परमाणुओं में निवास कर रहा है, जिसे अणु और परमाणु स्वयं नहीं जानते, वही अन्तर्यामी परमात्मा है। योग द्वारा मनुष्य अपने अन्दर छिपे परमेश्वर का साक्षात्कार कर सकता है। आइये हम सब उस प्रभु से प्रार्थना करें और योग का निष्ठापूर्वक अभ्यास प्रारम्भ करें। हमें अवश्य परम शान्ति और अनन्त सुख का वरदान प्राप्त होगा।

मेरा आदर्श

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

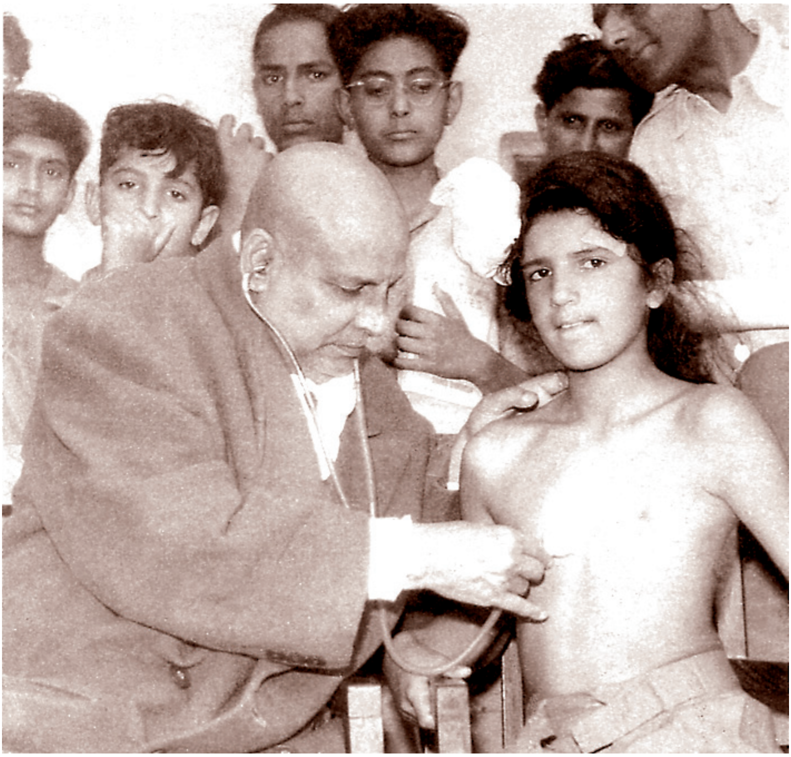

पतितों को उठाना, नेत्रहीनों का मार्गदर्शन करना, पीड़ितों को दिलासा देना, दुखियों के चेहरे पर मुस्कान लाना और इस हेतु अपना सर्वस्व लुटा देना – यही मेरे जीवन का आदर्श है।

अपने हृदय और आत्मा की गहराई से ईश्वर में सम्पूर्ण श्रद्धा, प्रेम और भक्ति रखना; अपने पड़ोसियों से आत्मवत् प्रेम करना; गउओं, मूक पशुओं, स्त्रियों एवं बच्चों की रक्षा करना – यही मेरे ध्येय हैं।

मेरे जीवन का मूलमंत्र है – प्रेम। मेरा लक्ष्य है – सहज समाधि अवस्था अर्थात् सर्वोच्च चेतना में सहज रूप से अखण्ड निवास।

शिवानन्द योग

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

विश्व में योग के दो महान् प्रणेता हुए हैं। एक थे महर्षि पतंजलि, जिनकी 'पातंजल योग सूत्र' नामक अमर कृति आज हमलोगों को योग मार्ग में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। पातंजल योग दर्शन में अष्टांग योग अर्थात् यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि की चर्चा है। यम और नियम अपने मनोव्यवहार को सन्तुलित बनाने, अपने मानसिक वातावरण को स्वस्थ बनाने और अपने जीवन के नकारात्मक दृष्टिकोण को बदलने के उपाय हैं। महर्षि पतंजलि अपने तीसरे सूत्र में कहते हैं – *तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्* – तब द्रष्टा अपने स्वरूप में स्थित होता है। द्रष्टा कौन है? जो अपने आपको देख सके और अपने नकारात्मक एवं निराशावादी दृष्टिकोण को बदल सके। नकारात्मक या निराशावादी दृष्टिकोण तमस् और रजस् के प्रभाव के कारण होता है। ऐसा व्यक्ति सात्त्विक गुणों को कभी नहीं अपना पायेगा। इसलिए योग दर्शन में यह शिक्षा दी गई है कि पहले तुम आत्म-विश्लेषण, आत्म-निरीक्षण और आत्म-सजगता के द्वारा अपने को पहचानने का प्रयास करो। जो दैवी सम्पदा है, उसे उपयोग में लाओ। इसीलिए सबसे पहले महर्षि पतंजलि ने सत्त्व की ओर ले जाने के लिए यम तथा नियम की चर्चा की है।

तीसरे और चौथे अंग में वे शिक्षा देते हैं आसन और प्राणायाम की। शरीर सन्तुलित हो, शरीर में प्राणों का संचार सुचारु रूप से हो ताकि हमारी अतीन्द्रिय शक्ति जाग्रत हो सके। पाँचवें और छठे सोपान में वे शिक्षा देते हैं मनोनिग्रह की, अर्थात् प्रत्याहार और धारणा की। सातवीं और आठवीं कक्षा में वे ध्यान और समाधि के रूप में तन्मयता की शिक्षा देते हैं। जब मनुष्य तन्मय हो जाता है तब उसे शरीर की सुध नहीं रहती। देश, काल, वस्तु, परिस्थिति, किसी का बोध नहीं होता, क्योंकि तन्मयता की स्थिति में मनुष्य अपने भाव से एकाकार हो जाता है। ध्यान तथा समाधि इसी तन्मय अवस्था के प्रतीक हैं।

सामान्यतः हम लोगों का ध्यान कैसे होता है? बैठे हैं, जप कर रहे हैं, अचानक ख्याल आता है कि रसोईघर में तो सिगड़ी जल रही है, उसके ऊपर दूध रखा हुआ है। बस, ध्यान खत्म, मंत्र गायब, भगवान कृष्ण की छवि गायब। दूध सामने दिखलाई देता है कि वह उफन कर गिर रहा है, जल रहा है। आँखें

खुलती हैं, माला छूट जाती है और हम रसोईघर की ओर दौड़ पड़ते हैं। जब ऐसी स्थिति रहती है कि हम लोगों का मन बार-बार इधर-उधर खिंचा जाता है, ध्यान में तन्मयता नहीं आती, तब ध्यान का प्रयोजन क्या?

इसलिए अष्टांग योग की जो चर्चा महर्षि पतंजलि ने की, वह अपने को साधने की प्रक्रिया है। वह अपने आपमें एक साधना है, जिससे हम अपनी अन्तरात्मा, इन्द्रियों, प्राणों, मन, बुद्धि और भावना को नियंत्रण में ले आते हैं। महर्षि पतंजलि ने अष्टांग योग में जिस योग की चर्चा की है, उसको हम कहते हैं – योग साधना। साधना के बल पर हम एक स्थिति को प्राप्त करने में सक्षम हो जाते हैं, अपनी सीमाओं का अतिक्रमण कर एक अवस्था में स्थिर हो जाते हैं। लेकिन जब सब नियंत्रण में आ गये तब क्या होगा?

साधना की उपलब्धियों की अभिव्यक्ति

इसके बाद दूसरे महर्षि, जिन्होंने योग की इस साधना को जीवन में अभिव्यक्त करने की प्रेरणा दी है और एक नये अष्टांग योग की चर्चा की, वे हैं हमारे परमगुरु, स्वामी शिवानन्द जी। महर्षि पतंजलि का अष्टांग योग जहाँ पर समाप्त होता है, वहीं से स्वामी शिवानन्द जी का अभिव्यक्ति योग प्रारम्भ होता है। इसे मैं साधना नहीं, 'अभिव्यक्ति' कह रहा हूँ। पहले आपने योग की अनुभूति और उपलब्धि प्राप्त की, अब उसकी अभिव्यक्ति करनी है। पहले आपने योग को सिद्ध किया, अब योग को जीना है। यही शिवानन्द अष्टांग योग की विचारधारा है।

स्वामी शिवानन्द जी का अष्टांग योग शुरू होता है समाधि के बाद। साधना के द्वारा अगर तुम समाधि की अवस्था को भी प्राप्त कर लेते हो और समाधि को प्राप्त करने के बाद ईश्वर का साक्षात्कार होता है तो ईश्वर तुमसे केवल एक प्रश्न पूछेंगे, 'तुमने अपनी साधना के बल पर मुझे पा तो लिया, पर केवल एक बात बतला दो, कितने दुखियों की आँखों के आँसू तुमने पोंछे?' अगर हम जवाब देंगे कि 'भगवान, मैंने तो केवल आत्मोन्नति के लिए प्रयत्न किया है', तो भगवान कहेंगे, 'ठीक है बेटा, दर्शन तो हो गया, अब तू जा।' लेकिन अगर हम सिर ऊँचा करके कह सकें, 'भगवान! मैंने एक आदमी के आँसू पोंछे और उसके जीवन में खुशियाँ लाया' तो भगवान कहेंगे, 'बेटा, तू आ, मेरी गोदी में बैठ जा।' यही जीवन का आदर्श होना चाहिए और इसी आदर्श को हमारे परमगुरु, श्री स्वामी शिवानन्द जी ने समझाया है।

शिवानन्द योग के अष्ट सोपान

शिवानन्द योग के आठ अंग हैं – सेवा, प्रेम, दान, आत्मशुद्धि, अच्छा बनो, अच्छा करो, ध्यान और साक्षात्कार। पहला अंग है सेवा, इसमें कुछ विचित्रता दिखलाई दे सकती है। जब हम समाधि को प्राप्त कर चुके हैं, तब फिर हमें क्या करना है? सेवा। जो दिव्य ज्योति अब हम हर प्राणी में देखते हैं, उस दिव्य ज्योति की ओर स्वयं आकृष्ट हो जाना है। एक बार एकनाथ जी ने गंगोत्री से जल लेकर रामेश्वरम् की यात्रा की थी। रामेश्वरम् के मन्दिर में वे गंगोत्री के जल से शिवलिंग का अभिषेक करना चाहते थे। लेकिन मन्दिर में प्रवेश करने के पहले उन्होंने देखा कि एक गधा प्यास से तड़प रहा है। उन्होंने सोचा, 'भगवान! तू क्या परीक्षा ले रहा है मेरी! तेरे द्वार के सामने तू ही प्यास से तड़प रहा है' और अभिषेक के लिए वे गंगोत्री का जो पावन जल लाये थे, उस गधे को यह कह कर पिला दिया कि 'भगवान, तू प्यासा मत रह।' आपने भी आज तक अनेक प्राणियों को तड़पते देखा है, लेकिन सबकी अवहेलना की है। फिर आप साधक, योगी या सात्त्विक पुरुष कैसे हो सकते हैं? इसीलिए स्वामी शिवानन्द जी ने कहा कि उनके अष्टांग योग का पहला अंग है सेवा।

दूसरा अंग है प्रेम। सेवा के माध्यम से प्रेम का विस्तार होता है, और जब प्रेम का विस्तार होता है तब आसक्ति खत्म होती है। हमलोग जब प्रेम करते हैं तो उससे आसक्ति बढ़ती है। अगर हम किसी व्यक्ति से प्रेम करते हैं, तो उससे आसक्त हो जाते हैं। लेकिन सात्त्विक प्रेम में आसक्ति बढ़ती नहीं, बल्कि उसका नाश होता है।

किसी ने हमारे गुरुजी से जब पूछा था कि आसक्ति का नाश कैसे किया जाए, तो उन्होंने एक उदाहरण दिया था। मान लो एक कटोरी पानी है, जिसमें

तुम स्याही की एक बूँद गिरा देते हो और कटोरी के पानी का रंग स्याही के रंग का हो जाता है। अब उस रंग को उस जल से कैसे निकाला जाए? एक तरीका है। कटोरी के जल को घड़े के जल में डाल दीजिए और फिर निकाल लीजिए। जल साफ रहेगा, क्योंकि कटोरी में जो रंग था, वह अब उस पूरे घड़े में समा गया है। यही सूत्र है। अगर अपनी आसक्ति को कम करना चाहते हो तो उसकी सीमा को बढ़ाते जाओ।

पहले प्रेम आसक्ति का कारण बनता है और वही प्रेम बाद में मुक्ति का कारण भी बनता है। अपने प्रेम का विस्तार करो, उनके प्रति जो तुम्हारे कुछ नहीं लगते। श्री स्वामीजी कहते हैं कि अगर बाजार जाकर अपने बच्चों के लिए जूते या कपड़े खरीदते हो, तो एक काम करो, एक जोड़ा और खरीद लो। यह मान कर चलो कि दो नहीं, तीन सन्तानें हैं। और वह तीसरा जोड़ा ऐसे बच्चे को दे दो जिसे उसकी आवश्यकता है। इतना तो हर कोई कर सकता है। अगर सक्षम हो तो एक के बदले दो का कल्याण करो, दो के बदले तीन का कल्याण करो, तीन के बदले चार का कल्याण करो। उसमें तुम जो आत्म-सन्तोष, तृप्ति और आन्तरिक प्रेम का अनुभव करोगे, वह तुम्हारे जीवन में उत्थान का, कल्याण का, मोक्ष का कारण बनेगा।

मनुष्य की मूल प्रवृत्ति है संग्रह की। संग्रह अपने से जुड़ी वृत्ति है – 'मैं चाहता हूँ, मैं कामना करता हूँ।' संग्रह से मनुष्य तामसिक होता है। अगर निन्यानवे है, तो सौ की चिन्ता हो जाती है। मनीषियों ने कहा है कि जीवन में जो भी कामना होती है, वह सगर्भा होती है। उस कामना के भीतर एक दूसरी कामना पहले से ही पनप रही होती है। उसके भीतर तीसरी कामना का बीज पहले से ही पड़ा होता है। संग्रह की वृत्ति इस कामना को और बढ़ाती है।

अब इस संग्रह वृत्ति को कैसे कम किया जाए? दान के द्वारा। यही शिवानन्द योग का तीसरा आयाम है। फिर चौथा आयाम है आत्मशुद्धि। जब प्रेम का भाव जागृत होता है और संग्रह की वृत्ति कम हो जाती है, तब फिर वास्तविक आत्मशुद्धि का हम अनुभव कर पाते हैं और उस आत्मशुद्धि में शान्ति का, पवित्रता का अनुभव होता है।

अच्छे बनो, यह पाँचवाँ आयाम है। एक बार शुद्धि की स्थिति आती है, तब पाँचवाँ आयाम अपने आप सिद्ध हो जाता है। मनुष्य स्वयमेव अच्छा बन जाता है। अच्छा बनने का मतलब जीवन में सत्त्व की जागृति हो जाती है, तमस् और रजस् का प्रभाव समाप्त हो जाता है। इस सत्त्व की अभिव्यक्ति

हमेशा होती रहती है। प्रकृति में मनुष्य को छोड़कर कोई ऐसी वस्तु नहीं जो सिर्फ अपने लिए जीती है। नदी कभी अपना जल नहीं पीती, वृक्ष कभी अपना फल नहीं खाता। मनुष्य ही सृष्टि का एकमात्र प्राणी है जो दूसरों के लिए नहीं, अपने लिए ही जीता है। क्या ऐसा प्राणी महान् हो सकता है?

समाज में जितने भी प्रेरक आदर्श पुरुष हुए हैं, क्या वे अपने लिए जीते थे? स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा है कि जो दूसरों के लिए जीता है वही वास्तव में जीता है, खुद के लिए जीने वाले तो मृततुल्य जीवन व्यतीत करते हैं। जो दूसरों के लिए जीता है, उसके जीवन में सत्त्व की अभिव्यक्ति सहज रूप से होती है। वह हर समय अच्छा काम ही करता है। यही शिवानन्द योग का छठा अंग है।

सातवें आयाम में स्वामी शिवानन्द जी कहते हैं कि जब व्यवहार में सत्त्व जाग्रत हो जाता है, केवल एक आदर्श के रूप में नहीं, बल्कि आचरण में दिखायी देने लगता है, तब जाकर अन्तिम तन्मयता की स्थिति आती है। और वह तन्मयता है ध्यान। ध्यान पातंजल योग का भी सातवाँ आयाम था, पर शिवानन्द योग का ध्यान एक जीवन्त और जाग्रत अनुभूति है। इस ध्यान की अवस्था में मनुष्य को आँख मूंदकर बैठने की, साधना करने की आवश्यकता नहीं। वह तो खुली आँखों से, जागते हुए, चलते-फिरते हुए भी उस तन्मय अवस्था में रहता है। उस ध्यान से फिर अन्त में उस अवस्था की प्राप्ति होती है जिसे महर्षि पतंजलि ने समाधि कहा और स्वामी शिवानन्द जी ने सहज समाधि या आत्म-साक्षात्कार।

यह शिवानन्द अष्टांग योग है, जो पातंजल योग के बाद प्रारम्भ होता है। इसमें हमें योग की पूर्णता दिखलाई देती है। यह योग का ऐसा क्रम है, जिसका अनुभव हो जाए तो मनुष्य दिव्य, ईश्वरीय रूप में परिणत हो जाता है।

विचारशक्ति से नई सभ्यता की रचना

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

विचार-संस्कृति एक सटीक विज्ञान है। व्यक्ति को सम्यक् विचारों का पोषण करना चाहिए तथा सभी प्रकार के व्यर्थ एवं सांसारिक विचारों को निकाल फेंकना चाहिए। जो व्यक्ति बुरे विचारों को पनपने देता है वह अपने आपको तथा अपने वातावरण, दोनों को हानि पहुँचाता है। वह विचार-संसार को दूषित करता है। उसके बुरे विचार सुदूर व्यक्तियों के मन में भी प्रवेश करते हैं, क्योंकि विचार तडित-वेग से चलते हैं।

सभी प्रकार के रोगों के कारण बुरे विचार हैं। सभी रोग सर्वप्रथम एक अशुद्ध विचार से जन्म लेते हैं। जो उदात्त और दिव्य विचारों को मन में रखता है वह अपनी तथा संसार की भी असीम भलाई करता है। वह सर्वत्र सान्त्वना, आशा, शान्ति एवं प्रसन्नता प्रसारित कर सकता है।

आदर्श का महत्त्व

बड़ी शोचनीय बात है कि अधिकतर लोगों का जीवन में कोई आदर्श नहीं होता। पढ़े-लिखे लोग भी किसी आदर्श को पसन्द नहीं करते। वे लक्ष्यहीन

जीवन व्यतीत करते हैं और इसलिए एक तिनके के टुकड़े के समान इधर-उधर दिशाहीन भटकते हैं। वे जीवन में बिल्कुल प्रगति नहीं करते। क्या यह एक दयनीय स्थिति नहीं है? मनुष्य जीवन पाना कितना कठिन है और फिर भी लोग जीवन में एक आदर्श को अपनाने का महत्त्व नहीं समझते।

'खाओ, पीओ और मस्त रहो' की धारणा धनवान् और लोभी भोगवादियों द्वारा अपनाई जाती है। इस मत के असंख्य अनुयायी हैं और यह गणना प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। यह असुरों और राक्षसों का आदर्श है, जो व्यक्ति को क्लेश और दुःख के अन्धकार की ओर ही ले जायेगा।

वह व्यक्ति धन्य है जो अपने विचारों का उत्थान करता है, एक आदर्श रखता है तथा अपने आदर्श पर जीने के लिए कठोर परिश्रम करता है।

आध्यात्मिक प्रगति के लिए विचार शक्ति

विचार ठोस वस्तुएँ हैं, एक मिसरी के ढेले से भी कहीं अधिक ठोस। इनमें अत्यधिक बल एवं ऊर्जा होती है। इस विचार शक्ति को सावधानी से उपयोग में लाना चाहिए। यह विभिन्न तरीकों से तुम्हारी सेवा कर सकती है। परन्तु निरर्थक और बेतरतीब उद्देश्यों के लिए इस शक्ति का दुरुपयोग न करो। यदि तुम इस शक्ति का दुरुपयोग करते हो, तो तुम्हें शीघ्र ही इसकी भयंकर प्रतिक्रिया का सामना भी करना होगा। तुम्हारा पतन होगा। इसलिए इस शक्ति का उपयोग दूसरों की सहायता के लिए ही करो।

भय, स्वार्थ, घृणा, कामुकता तथा अन्य विकृत नकारात्मक विचारों का निष्ठुरता से निर्मूलन करो। ऐसे विचार दुर्बलता, रोग, असामंजस्य, अवसाद और निराशा उत्पन्न करते हैं। दया, साहस, प्रेम एवं पवित्रता जैसे सकारात्मक विचारों का पोषण करो। नकारात्मक विचार अपने आप ही मर जायेंगे। प्रयत्न करो और अपने सामर्थ्य का अनुभव करो। शुद्ध विचार तुम्हें नवजीवन प्रदान करेंगे।

उदात्त दिव्य विचार मन में विस्मयकारी प्रभाव उत्पन्न करते हैं। वे बुरे विचारों को दूर भगाते हैं और मानसिक भाव में परिवर्तन लाते हैं। दिव्य विचारों को लाने से मन पूर्ण रूप से प्रकाशित हो जाता है।

समान वस्तुएँ एक-दूसरे को आकृष्ट करती हैं। यदि तुम एक बुरा विचार मन में लाते हो तो वह विचार अन्य व्यक्तियों के सभी प्रकार के दुष्ट विचारों को अपनी ओर आकृष्ट करता है। उन्हीं विचारों को तुम दूसरों तक भी पहुँचाते हो। इस तरह अपने बुरे विचारों से तुम विश्व को दूषित करते हो। लेकिन यदि तुम

अपने मन में एक उदात्त विचार लाते हो तो यह विचार दूसरों के अच्छे विचारों को आकृष्ट करेगा। तुम उस शुभ विचार को अन्य लोगों तक पहुँचा सकोगे।

जिस प्रकार फालतू बातचीत और गपशप में ऊर्जा नष्ट होती है, उसी प्रकार व्यर्थ विचार करने में भी शक्ति का ह्रास होता है। इसलिए तुम्हें एक भी व्यर्थ विचार नहीं करना चाहिए। अपनी मानसिक ऊर्जा को बचाओ, इसका उपयोग उच्च आध्यात्मिक कार्यों और दिव्य चिन्तन में करो। व्यर्थ विचार तुम्हारी आध्यात्मिक प्रगति में बाधक हैं। जब तुम बुरे विचारों को मन में लाते हो, तब तुम प्रभु से दूर होते हो। केवल उन्हीं विचारों को लाओ जो सहायक एवं लाभदायक हैं।

सात्त्विक विचार आध्यात्मिक प्रगति का मार्ग प्रशस्त करते हैं। मन को पुरानी लीकों में जाने तथा मनमर्जी करने की अनुमति न दो। सदा सतर्क और चौकस रहो।

विचार शक्ति और एक नवीन सभ्यता

विचार मनुष्य को बनाता है और मनुष्य सभ्यता को। इतिहास की प्रत्येक महान् घटना के पीछे एक शक्तिशाली विचार-शक्ति रही है। सभी खोजों और आविष्कारों के पीछे, सभी धर्मों और दर्शन-शास्त्रों के पीछे, सभी प्राण-रक्षक अथवा प्राण-विनाशक उपकरणों के पीछे विचार ही रहे हैं।

एक नई सभ्यता का निर्माण कैसे किया जाए, जो मानव-जाति की शान्ति, समाज की खुशहाली और व्यक्ति की मुक्ति सुनिश्चित कर सकेगी? एक ऐसी विचार-शक्ति के सृजन द्वारा जो मनुष्यों के दिलो-दिमाग में करुणा, सेवा, प्रभु प्रेम और उसे पाने की तीव्र इच्छा स्थापित कर देगी।

जो धन और समय व्यर्थ के मनसूबों और विनाशकारी गतिविधियों में बरबाद किया जाता है, उसका अंश मात्र भी यदि एक अच्छे विचार के सृजन में दिया जाए, तो अभी और इसी वक्त एक नई सभ्यता का शुभागमन हो जाएगा।

अणु और परमाणु बम, आई.सी.बी.एम. मिसाइलें तथा अन्य इसी प्रकार के आविष्कार मानव-जाति को निश्चित रूप से विनाश की ओर ले जाएँगे। वे तुम्हारे धन को नष्ट करते हैं, तुम्हारे पड़ोसियों का विनाश करते हैं, पूरे विश्व का वातावरण दूषित करते हैं और तुम्हारे हृदय में भय, घृणा तथा संदेह पैदा करते हैं। मन असंतुलित हो जाता है और शरीर रोग-ग्रस्त हो जाता है। इस प्रवृत्ति को तत्काल समाप्त किया जाना चाहिए।

अध्यात्म और धर्म जैसे जीवन के सभी सात्त्विक पहलुओं में अध्ययन और अनुसंधान को बढ़ावा दो। ऐसे सन्तों एवं मनीषियों की सहायता करो जो वास्तव में मानव-जाति के हितैषी हैं। उन्हें धर्म के पठन-पाठन, प्राचीन आध्यात्मिक साहित्य में शोध तथा विश्व कल्याण के लिए प्रबल विचार-शक्ति के प्रसार-प्रचार के लिए प्रोत्साहित करो।

ऐसे सभी अश्लील और अवांछित साहित्य पर प्रतिबन्ध लगाओ, जो युवा पीढ़ी के विचारों को दूषित करता है। युवा दिमाग को स्वस्थ विचारों, भावनाओं तथा आदर्शों से लबालब भर देना चाहिए। जो व्यक्ति बटुआ चुराता या धोखा देता या हत्या करता है, कानून उसे दण्ड देता है। परन्तु ये अपराध उस अपराध की तुलना में कुछ भी नहीं, जिसमें एक भ्रष्ट व्यक्ति समस्त युवा पीढ़ी का मन कुविचारों से भर देता है। वही व्यक्ति धरती पर होने वाली हत्याओं और अन्य अपराधों का वास्तविक सूत्रधार है। वह तुम्हारे सबसे बड़े धन, तुम्हारी विवेक-बुद्धि को चुरा लेता है। वह तुम्हें मीठे अमृत के नाम पर विष दे देता है। नई सभ्यता का कानून ऐसे असुरों से बड़ी सख्ती से निपटेगा।

नई सभ्यता उन व्यक्तियों को हर सम्भव प्रोत्साहन देगी जो दर्शन शास्त्र, धर्म तथा अध्यात्म का पठन-पाठन करना चाहते हैं। यह इन विषयों का अध्ययन विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में अनिवार्य करेगी। यह आध्यात्मिक क्षेत्र के विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्तियाँ प्रदान करेगी, धर्म और दर्शन में शोध करने वालों को पुरस्कारों एवं उपाधियों से सम्मानित करेगी। आध्यात्मिक लालसा मनुष्य की अन्तरतम कामना है, इसे अभिव्यक्ति का पूर्ण अवसर देना चाहिए।

नई सभ्यता के निर्माण में लगाई गई सारी मेहनत एक दिन अवश्य रंग लाएगी। नई सभ्यता में मनुष्य पवित्र जीवन व्यतीत करना चाहेगा और अपने साथियों की सेवा के लिए सदैव तत्पर रहेगा। परमात्मा सभी में निवास करता है – इस तथ्य की अनुभूति कर वह सभी से प्रेम करेगा। वह सभी जीवात्माओं के कल्याण के लिए समर्पित रहेगा। यह एक ऐसा आदर्श समाज होगा जहाँ लोग अपना सब-कुछ दूसरों के साथ बाँट लेंगे और प्रत्येक व्यक्ति की सेवा करेंगे! ऐसे समाज में कर और शुल्क की क्या आवश्यकता रहेगी जब प्रत्येक व्यक्ति सभी के लिए स्वेच्छा से कार्य करेगा? पुलिस और सेना की आवश्यकता कहाँ होगी जब सभी लोग सदाचार के प्रति समर्पित होंगे? यही नई सभ्यता का आदर्श है। इस लक्ष्य के लिए प्रत्येक व्यक्ति को सकारात्मक विचार-शक्ति के सृजन और सम्प्रेषण के लिए प्रयास करने दो।

विनम्र श्रद्धांजलि

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

इस वर्ष भी अन्य वर्षों की भाँति श्री गुरुदेव स्वामी शिवानन्द जी की वर्षगांठ मनाई जा रही है। देश-देशान्तरों से उनके भक्तों, शिष्यों और धर्म-प्रेमी नायकों ने उनके नाम अपने सन्देश भेजे हैं।

'दिव्य जीवन मण्डल' के नेतृत्व में इस मास के आठवें दिवस को शिवानन्द-जयन्ती का बृहत् समारोह मनाया गया है। देश के कोने-कोने और समुद्र पार से भक्तों का समूह श्री गुरुदेव के आशीर्वाद के लिए आ जुटा है। शिवानन्दनगर का यह समारोह अपूर्व रहा।

श्री स्वामीजी इस युग में अवतरित हुए हैं, जन-समुदाय को जीवन का सत्पथ बतलाने के लिए। वे किसी धर्म-विशेष या सम्प्रदायगत रूढ़ियों के अनुशासन के लिए नहीं, अपितु सभी धर्मों और राष्ट्रों की आत्मा को श्रेय के मन्त्र में दीक्षित करने के लिए प्रकट हुए हैं।

उनका धर्म, सम्प्रदाय का धर्म या राष्ट्र का संकीर्ण सिद्धान्त नहीं; उनका धर्म जटिल तपस्या, कुटिल योग और निर्बल ज्ञान को प्रश्रय देने नहीं, अपितु विशाल जीवन की भव्यता को, जो अज्ञान से आच्छन्न है, आलोकित करने के लिए ही है। जहाँ विश्व में राग-द्वेष है, वहाँ सर्वभूतमैत्री; जहाँ पाप और छल-कपट है, वहाँ पवित्रता; जहाँ काम-क्रोध है, वहाँ संयम; और जहाँ विप्लव और युद्ध है, वहाँ शान्ति – इसके प्रवर्त्तन और स्थापन के लिए उनका अवतार हुआ है।

उनके वेष में कोई आडम्बर नहीं; उनके योग में कोई रहस्य नहीं; उनके प्रेम में कोई स्वार्थ नहीं; उनके कार्य में कोई अंहकार नहीं – वे एक सीधे-सादे और भले व्यक्ति का सच्चा आदर्श उपस्थित कर जनप्रिय और विश्व-वन्द्य बने हैं। 'सीधा जीवन, सात्त्विक चिन्तन, अच्छा कर्म, अच्छी वृत्ति' – यही उनके योग या धर्म या तत्त्वज्ञान या प्रचार का लक्ष्य-बिन्दु रहा है; और इसी को समझाने के लिए उन्होंने विविध साधनों का अवलम्बन ग्रहण किया है। 6+3 का योग तो 9 होता ही है पर 7 और 2, या 5 और 4 अथवा 1 और 8 का योग भी 9 ही होता है। शिवानन्द-योग की विविध प्रक्रियाएँ हैं जरूर; पर उन सबका योगफल है – सत्पथगामी जीवन, सद्विचारपूर्ण चिन्तन,

सत्कर्मपूर्ण आचरण। धर्म या दर्शन का इससे बढ़कर और ध्येय हो ही क्या सकता है? मोक्ष की यही परिभाषा है; जीवनमुक्ति के यही लक्षण हैं; आत्म-साक्षात्कार की यही कसौटी है; और जीवन का चरम विकास इस गति पर आकर प्रफुल्लित हो जाता है। इसीलिए शिवानन्द-योग पूर्ण योग है, पवित्र योग है, कल्याणकारी योग है और जीवन का सहकारी योग है। भगवान, इस योगी को अमर बनाओ!

– योग-वेदान्त के सितम्बर 1955 अंक से साभार उद्धृत

मातृत्व की महिमा

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

माँ का व्यक्तित्व ऐसा होता है कि मानव मन को बहुत आकृष्ट करता है। बच्चे पिता की अपेक्षा माँ के अधिक निकट होते हैं, उन्हें माँ अधिक प्रिय होती है। वह वात्सल्य, कोमलता और प्रेम की प्रतिमा होती है। वह सौम्य, मधुर और कोमल होती है। बच्चा पिता की अपेक्षा माँ के सामने निःसंकोच होकर मन की बातें कहता है।

क्या कोई ऐसा बच्चा है जो अपनी माँ के स्नेह और प्यार का ऋणी न हो? माँ जीवनभर मित्र, दार्शनिक, संरक्षक और मार्गदर्शक की भूमिका निभाती है। मानव शरीरधारी माँ जगज्जननी की ही अभिव्यक्ति है। इस जगत् में बच्चे की सारी आवश्यकताएँ माँ ही पूरी करती है।

हम काली या अन्य देवियों को अकारण ही मातृ-भाव से नहीं पूजते हैं। हम अपने देश को अकारण ही मातृ-भूमि कहकर नहीं पुकारते हैं।

सच्चरित्रता के मार्ग पर चलकर नारियाँ कोई भी असम्भव कार्य कर सकती हैं। स्त्री साक्षात् शक्ति-स्वरूपा, भगवान की चैतन्य माया है। उसमें काली का आविर्भाव है। वही तो जगत्-जननी के रूप में जगत् का पालन करती है। वही पुरुष के जीवन में सच्ची और विश्वसनीय संगिनी है।

माता प्रथम गुरु होती है। शिशु अपनी माता से ही अक्षर ज्ञान सीखता है। वह अपनी माता से ही बोलना सीखता है। माता अपने बच्चे को सज्जन या दुर्जन बना सकती है। शची नामक एक माता ने भगवान के गीत गाते-गाते और भगवद्-भक्ति की घुट्टी पिलाकर अपने पुत्र का पालन-पोषण किया और संसार को गौरांग प्रदान किया। गौरांग ने बंगाल के लोगों की मनोवृत्ति ही परिवर्तित कर दी। शिवाजी की नसों में उनकी माता का ही रक्त प्रवाहित हो रहा था। उनमें अपनी माता की ही जीवन-शक्ति विद्यमान् थी। इसी कारण वे महान् बन सके। नेपोलियन की माता सदैव अपने साथ ग्रीस और रोम देशों के वीरों के चित्र रखा करती थी और उनके गीता गाया करती थी। जन्म लेने से पूर्व ही नेपोलियन में वीरता की भावना अंकुरित होने लगी थी। गर्भस्थ अभिमन्यु ने चक्रव्यूह के अन्दर प्रवेश करने की विधि जान ली थी।

नारियों को अच्छी माताएँ बनना चाहिए। नारियों के मनोवैज्ञानिक लक्षण, स्वभाव, क्षमताएँ, सद्गुण, वृत्तियाँ तथा मनोवेग एक विशिष्ट प्रकार के होते हैं और वे केवल उन्हीं में पाए जाते हैं। वे मातृत्व की महिमा से घर को प्रकाशित कर देती हैं।

स्त्री किसी भी रूप में, किसी भी प्रकार से और किसी भी विषय में पुरुष से कम नहीं है। वह उदात्त है। धैर्य, सहनशीलता, भक्ति और प्रेम उसकी नस-नस में भरे हैं। स्त्रियों में पुरुषों की अपेक्षा अधिक गुण होते हैं। आत्मनिग्रह का महान् गुण पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में ही अधिक होता है। आध्यात्मिक साधना और आत्म-साक्षात्कार स्त्री का जन्मजात अधिकार है। वह उसकी पूर्ण अधिकारिणी है। स्त्री को जन्म से ही पवित्रता और निष्काम प्रेम तथा आत्म-बलिदान का वरदान प्राप्त है। बुद्धिमती, संस्कारी और भक्त स्त्री गृह-लक्ष्मी है। उसकी जीवन-ज्योति से सारा घर आलोकित हो जाता है और उसके सुचरित्र की जगमगाती पवित्र दीपावली में घर के सभी परिवारजन नित्य नवीन उत्सव मनाया करते हैं। घर-घर में अपने रूप, सौंदर्य और कार्य-कुशलता पर गर्व करने वाली हजारों स्त्रियाँ हैं, किन्तु वही सच्ची स्त्री है, जो घर के वातावरण में देवत्व की प्राण-वायु को संचारित कर सकती हो।

गृहलक्ष्मी की रूपान्तरण-शक्ति घर के वातावरण का सृजन करती है। शिशु की भावना उसी के द्वारा निर्मित होती है। उसमें इतनी शक्ति है कि वह गृहस्थ जीवन के वातावरण को तथा अपने पति को स्वयं ही परिवर्तित कर सकती है। इसीलिए यह कहा जाता है कि स्त्री ही पुरुष का नेतृत्व करती है। आध्यात्मिक क्षेत्र में भी यही बात सत्य है।

नारी घर की शोभा और स्वामिनी है। वह अनुपयोगी, हेय या महत्त्वहीन नहीं है। वह न तो पुरुष के सिर से उद्भूत हुई है कि उस पर शासन करे और न उसके पाँवों से निकली है जो उसकी दासी बनकर रहे। स्त्री तो भगवान की अति अद्भुत और सबसे महान् विभूति है। वह प्रकृति की प्रतिमूर्ति है।

पारिवारिक कर्तव्यों का पालन करना, गृहस्थी की व्यवस्था करना और सन्तान का पालन-पोषण करना नारी के सम्यक् कार्यकलाप हैं। नारी पहले से ही दिव्यशक्ति से सम्पन्न है। अपने प्रेम और स्नेह की शक्ति से वह पहले से ही समस्त संसार का संचालन कर रही है। अपनी सन्तानों को प्रशिक्षित करके उन्हें अच्छे नागरिक बनाने तथा सम्पूर्ण मानव-जाति का चरित्र निर्माण करने की क्षमता उसकी एक ऐसी शक्ति का परिचायक है जो विधायक, मन्त्री या न्यायाधीश बनकर प्राप्त होने वाली शक्ति से कहीं अधिक है।

मानव जाति को आवश्यकता है स्वस्थ माताओं, दृढ़ और बलिष्ठ पुत्रों और नीरोग कन्याओं की। आज हमें इसके विपरीत ही देखने को मिल रहा है। भीष्म, भीम, अर्जुन, द्रोण, कृपाचार्य, परशुराम जैसे अगणित वीरों की जननी भारत माँ की कोख में आज अद्वितीय वीर-रस से ओत-प्रोत नवयुवक देखने को नहीं मिलते। हाँ, कायरों, नपुंसकों और आसक्तों की कोई कमी नहीं है।

महिलाओं को अपने स्वास्थ्य की ओर पूरा ध्यान देना चाहिए। आरोग्य के नियमों का जरा भी उल्लंघन करना उचित नहीं। उन्हें प्रतिदिन योगासन और व्यायाम करना चाहिए। भारत की महिलाओं का स्वास्थ्य इतना गिरा हुआ है, जैसा और किसी देश में नहीं। व्यायाम न करने से उनका विकास अवरुद्ध हो जाता है, वे रक्त रोग, पाण्डु रोग, ल्यूकोरिया और एनीमिया जैसे रोगों के चंगुल में फँस जाती हैं। जाति और प्रजा का भार जिनके कन्धों पर है, जो अनेक पीढ़ियों की विश्वकर्मा हैं, वे आज अपने ही जीवन को भार-स्वरूप व्यतीत कर रही हैं। बल, वीर्य, ओज और स्वस्थ शरीर का गठन करना उनका प्रधान कर्तव्य है।

सर्वांगासन, भुजंगासन, शलभासन, धनुरासन, पश्चिमोत्तानासन – इन सब महत्त्वपूर्ण आसनों का प्रतिदिन अभ्यास अवश्य करना चाहिए। आसनों के

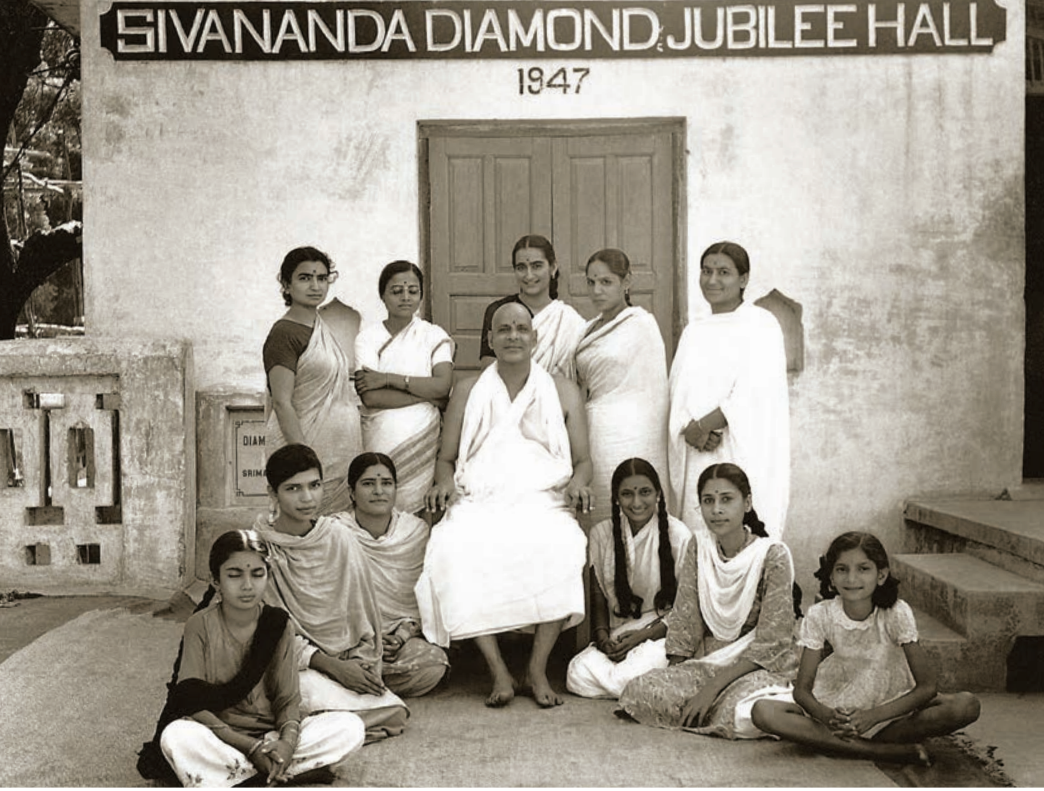

साथ प्राणायाम का अभ्यास भी उतना ही जरूरी है। सौन्दर्य प्राप्त करने के लिए आराम की अनिवार्य आवश्यकता है। प्रतिदिन सुबह, दोपहर और शाम को दस मिनट आखें बन्दकर मन के सब विचारों को हटाकर आराम करने से शरीर और मन, दोनों स्वस्थ और प्रफुल्लित रहते हैं।

देश के खोये हुए गौरव, संस्कृति, सभ्यता और समृद्धि को समस्त नारी जागरण के द्वारा ही पुनः प्राप्त किया जा सकता है। भाग्यशाली देवियों! सीता की पवित्रता तुम्हारे जीवन की ज्योति बने और प्राचीन काल की अनसूया जैसी देवियों की सरलता और सात्त्विक जीवनचर्या तुम्हारे जीवन को अमृत से सिंचित कर दे। भगवान की कृपा से अपने हृदय में राधा जैसी भक्ति का दीप जलाओ। आध्यात्मिक जीवन को क्षीण न होने दो। अपने जीवन को सार्थक करो। नक्षत्रों में अरुन्धती तुम्हारा आदर्श हो। ध्रुव तारे की तरह उज्ज्वल और निश्चल बनो। अपने सनातन रूप की दिव्यता को समस्त प्रकृति में परिव्याप्त कर दो। तुम्हारे धवल यश की महिमा सर्वत्र जगमगाती रहे!

महाकाली की प्रत्यक्ष अवतार-स्वरूपा जगत् की सभी स्त्रियों को मेरा कोटि-कोटि प्रणाम और साष्टांग नमस्कार!

प्रेरक पत्रादेश

1 अगस्त, 1949
ऋषिकेश

प्रिय राम,

निर्भीकता से सोचो और निडरता से कार्य करो। उच्च आदर्श तुम्हारे हृदय को पवित्र बनायेंगे और अमरता की ओर अग्रसर करेंगे। इस मायिक जीवन से चिपकने की प्रवृत्ति का त्याग करो। निर्भय बनो। अनासक्ति को जागृत करो। अनन्त एवं सर्वोच्च सुख-शान्ति की खोज में रहो। सभी भय अपने आप लुप्त हो जायेंगे।

ध्यानपूर्वक मनन करो और सटीक निर्णय लो। निष्ठापूर्वक कार्य करो। सत्यवादी बनो। मीठा बोलो। सुचारु ढंग से व्यवहार करो। तुम्हें मानसिक शान्ति प्राप्त होगी। तुम्हें अपने जीवन की हर परिस्थिति में सफलता मिलेगी। शुद्ध अन्तःकरण और अक्षय आध्यात्मिक सम्पदा की प्राप्ति होगी। प्रभु के प्रति तुम्हारी निष्ठा सदैव बनी रहे।

मनोवेग बलवान् है, परन्तु विवेक अधिक बलशाली है। अतएव यह मनोवेग को नियंत्रित कर सकता है। क्रोध बलवान् है, लेकिन प्रेम उससे अधिक शक्तिशाली है। अतः यह क्रोध को नियंत्रित कर सकता है। जिह्वा बलवान् है, परन्तु बुद्धि अधिक शक्तिशाली है। इसलिए यह जिह्वा को नियन्त्रित कर सकती है। विवेक, प्रेम एवं सद्बुद्धि को विकसित करो और आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करो।

निष्कपट श्रद्धा-भक्ति एवं निर्मल शुचिता सच्चे साधक की दो प्रमुख विशेषताएँ हैं। इन दो विशेषताओं के अभाव में तुम आत्म-साक्षात्कार प्राप्त नहीं कर सकते। आत्म-साक्षात्कार के अतिरिक्त अन्य किसी भी वस्तु को तुच्छ एवं व्यर्थ समझो। जीवन में दिव्यता लाओ, जीवन को ईश्वरत्व की ओर अग्रसर करो। यही सच्ची शिक्षा है। अन्य सभी लौकिक शिक्षाएँ तृणवत् हैं।

शिवानन्द

दिव्य जीवन के सूत्रधार

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

स्वामी शिवानन्द जी इस युग में बहुत बड़े आध्यात्मिक प्रणेता के रूप में सामने आए हैं। आप उन्हें संत, साधु, गुरु या महात्मा कह सकते हैं, पर जिस भी विशेषण से आप स्वामी शिवानन्द जी के नाम को अलंकृत करना चाहें, वे सभी शब्द उनके भव्य और विराट् व्यक्तित्व के सामने फीके पड़ जाते हैं।

हम उन्हें एक ऐसे युग-द्रष्टा और मनीषी के रूप में मानते हैं, जिन्होंने न केवल परमतत्त्व का अनुभव किया, बल्कि उस परमतत्त्व की अभिव्यक्ति का एक ज्वलन्त उदाहरण बन, भारत के आध्यात्मिक गगन में एक दीप्तिमान् नक्षत्र की तरह चमके। उन्होंने प्रत्येक व्यक्ति को आध्यात्मिक जीवन जीने की प्रेरणा दी। उनकी यह आध्यात्मिक शिक्षा किसी सैद्धान्तिक दर्शन पर नहीं, बल्कि स्वयं उनके जीवन के अनुभवों पर आधारित रही। ये अनुभव उन्हें ईश्वर की कृपा से प्राप्त हुए, जिन्होंने उन्हें आध्यात्मिकता के शिखर तक पहुँचा दिया।

दिव्य जीवन का प्रथम सोपान – पवित्रता

स्वामी शिवानन्द जी हमेशा कहा करते थे कि हर व्यक्ति में अपने जीवन को दिव्य बनाने की क्षमता है। हर व्यक्ति को अपना जीवन दिव्य बनाना चाहिए, क्योंकि उसी दिव्यता के माध्यम से मनुष्य का अपनी अन्तःशक्ति के साथ परिचय होता है। दिव्यता की शुरुआत होती है अपने आपको शुद्ध करने की प्रक्रिया से। जब तक शुद्धि नहीं, तब तक उपलब्धि भी नहीं। शुद्धि का मतलब होता है अपने पात्र को खाली करना। अगर एक बोतल में मूत्र भरकर गंगा जी में सौ साल भी डुबाकर रखोगे, तो क्या बोतल का मूत्र शुद्ध और पवित्र हो जाएगा? नहीं, क्योंकि बोतल का मुँह तो बन्द करके रखा है।

कितने ही लोग गंगा जी को दूषित करते हैं, लेकिन उनकी पवित्रता आज तक भंग नहीं हुई है। गंगा जी पवित्रता का सनातन प्रतीक रही हैं। स्वामी शिवानन्द जी को गंगा जी बहुत प्रिय थीं, क्योंकि वे केवल भारत की अस्मिता का नहीं, बल्कि जीवन की शुद्धता और पवित्रता का भी प्रतीक हैं, जिनके स्पर्शमात्र से मनुष्य अपने आपको विकारों और मलों से मुक्त करता आया है। आखिर जब शरीर गंदा होता है तो नहाते हो न, शरीर को साबुन से रगड़ते हो

न? लेकिन मन जब गंदा होता है तब उसे रगड़ते हो कभी? या उसी गंदगी में ही फिसलते रहते हो? गुस्सा आया, घृणा हुई, द्वेष हुआ, राग हुआ, फिसल गए। इसलिए सबसे पहले शुद्धि की आवश्यकता है। अन्तःकरण को पवित्र बनाकर, मन को सकारात्मक एवं रचनात्मक बनाकर, ब्रह्माण्ड में चारों ओर जो शक्ति निहित है, उसका अनुभव करना है। वही ब्रह्माण्डीय शक्ति जीवन के रूप में व्यक्त हो रही है। इस जीवन को ठीक से जीओगे तो स्वस्थ रहोगे। ठीक से नहीं जीओगे, तो अस्वस्थ रहोगे। नियम-अनुशासन का पालन करोगे तो आयु बढ़ेगी, अनियमित-अनुशासनहीन जीवन-शैली होगी तो आयु घटेगी।

यह केवल शास्त्र नहीं, आधुनिक विज्ञान भी कहता है। परीक्षणों द्वारा हाल में पता चला है कि हाईस्कूल के बच्चों को हृदय रोग होने की संभावना अधिक हो रही है। पहले कहा जाता था कि पैंतालीस के बाद ही हृदय रोग होने की संभावना है, लेकिन अभी कहा जा रहा है कि हाईस्कूल के छात्रों को भी यह संभावना है!

इसका क्या तात्पर्य है? क्या यह एक स्वस्थ जीवन, मानसिकता, विचारधारा, आचरण, अनुशासन और समाज की निशानी है? अगर है तो फिर ऐसा ही जीवन स्वीकार करो, इसके दुःख-सुख को स्वीकार करो। और अगर ऐसा नहीं है तो जो तुम्हारे लिए हानिकारक है, उसे छोड़ने का प्रयास करो, चाहे वह एक आदत हो, व्यवस्था हो या मन की एक स्थिति या वृत्ति हो। जब तक यह नहीं होगा, अन्तःकरण में पवित्रता और निर्मलता नहीं आएगी। आसन-प्राणायाम कितना ही क्यों न कर लो, लेकिन इनका भी वही प्रभाव

होगा जो दवा का होता है। दवा खाकर तुमने रक्तचाप कम किया। जब तक दवा का असर रहा, सब ठीक, लेकिन जैसे ही दवा का असर खत्म हुआ, रक्तचाप फिर बढ़ गया। उसे कम करने के लिए फिर दूसरी गोली खा ली। इस प्रकार जिन्दगीभर दवा ही खाते रहते हैं।

वैचारिक, भावनात्मक, मानसिक और बौद्धिक शुद्धि जीवन में पवित्रता का प्रतीक है। शुद्धि से ही आध्यात्मिक जीवन प्रारम्भ होता है। घर में पूजा-पाठ तो सभी करते हैं, भगवान के किसी-न-किसी रूप को धूप-दीप दिखा देते हैं या फूल अर्पित कर देते हैं। हर रविवार को गिरजाघर में जाकर प्रार्थना कर लेते हैं या शुक्रवार को मस्जिद में जाकर नमाज अदा कर लेते हैं या सोमवार को मंदिर में जाकर घण्टी बजा देते हैं। चाहे सकाम दृष्टि से हो या निष्काम, पूजा-पाठ सभी करते हैं। लेकिन इसके अतिरिक्त भी एक अवस्था है, जिसमें अपने आपको इन बाह्य क्रियाओं तक ही सीमित न रखकर, आन्तरिक पवित्रता लाने का प्रयास किया जाए। आन्तरिक पवित्रता का मतलब होता है, मन के अन्दर जो घृणित भाव हैं उनसे अपने आपको मुक्त करना। मुक्त होने का प्रयास ही शुद्धता की शुरुआत है। यह आध्यात्मिक जीवन का प्रथम सोपान है।

द्वितीय सोपान – ईश्वर प्रणिधान

आध्यात्मिक जीवन का दूसरा सोपान है, ईश्वर प्रणिधान – भगवान में श्रद्धा। चाहे तुम ईश्वर को साकार मानो या निराकार, चाहे उसे हजार रूपों में देखो या अव्यक्त मानो, लेकिन एक व्यवस्था, एक सत्ता है, जिससे जीवन का संचालन और संचार होता है। वही सत्ता विज्ञान में देश और काल के नाम से जानी जाती है। वह एक ऐसी सत्ता है जो सभी के भीतर व्याप्त है। जैसे श्वास और प्राण हर शरीर में व्याप्त हैं, वैसे ही वह सत्ता भी हर शरीर में व्याप्त है। कोई उसे आत्मा कहता है, कोई जीवात्मा, तो कोई परमात्मा की छाया। जैसे वायु संसार में सब जगह है, वैसे ही वह तत्त्व सभी वस्तुओं में, सभी रूपों में व्याप्त है। शक्ति, ऊर्जा, प्रणव, नाद, बिन्दु और कला के रूप में; चेतन, अवचेतन और अचेतन मन के रूप में; हर स्तर पर जो अनुभूति रहती है, वह उस अनुभूति की सजगता के रूप में अवस्थित है।

उस परमतत्त्व को हमारे मनीषियों ने विभिन्न नाम दिए हैं। नाम के द्वारा उस तत्त्व से तादात्म्य की स्थिति आती है। अगर आपको किसी से मिलना हो तो उस व्यक्ति का नाम लेने से उसका चेहरा ख्याल आता है। इसी प्रकार जब

हम भगवान का नाम लेते हैं, तब भगवान का उस नाम से जुड़ा हुआ चेहरा सामने आता है। नाम एक माध्यम बनता है, जिससे तादात्म्य की स्थिति आती है, सम्बन्ध जुड़ता है। उस सम्बन्ध से व्यक्ति का मनोबल, आत्मविश्वास एवं श्रद्धा बढ़ती है, और व्यक्ति अपने आपको हर झंझावात और दुःख में संभाल लेता है। वह अपने आपको कभी निराश्रित अनुभव नहीं करता।

आन्तरिक पवित्रता और ईश्वर प्रणिधान, गंगा जी और राम जी – स्वामी शिवानन्द जी द्वारा बताए गए इन दो उपायों को हमें अपने जीवन में उतारने का हर सम्भव प्रयास करना चाहिए। गंगा जी प्रतीक हैं पवित्रता की और राम जी प्रतीक हैं ईश्वर के। स्वामी शिवानन्द जी ने हम लोगों के लिए भगवान के छोटे नाम का ही चुनाव किया है, क्योंकि वह आसानी से याद रहता है। लम्बा नाम बोलने में आदमी भले ही कतराता है, लेकिन छोटे नाम को बहुत जल्दी याद कर लेता है! आज स्वामी शिवानन्द जी के जन्मोत्सव पर उनके इसी संदेश को आत्मसात् करना है।

राग-द्वेष का निर्मूलन

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

श्रीमद् भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को राग और द्वेष के बारे में समझाते हुए कहते हैं –

इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ।
तयोर्न वशमागच्छेत्तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ॥3.34॥

अर्थात् प्रत्येक इन्द्रिय के विषय में राग और द्वेष छिपे हुए हैं। मनुष्य को इन दोनों के वश में नहीं होना चाहिए, क्योंकि ये दोनों ही उसके कल्याण-मार्ग में विघ्न करने वाले महान् शत्रु हैं।

आकर्षण, पसन्द, प्रेम और आसक्ति ही राग है। विकर्षण, अरुचि, घृणा और नापसन्दगी द्वेष है। राग और द्वेष मन में उत्पन्न होने वाली दो वृत्तियाँ हैं जो अज्ञान और अविद्या से पैदा होती हैं। यह रहस्यमय संसार राग और द्वेष द्वारा ही बरकरार रखा जाता है। राग-द्वेष के ये दो प्रवाह माया के दो प्रबल शस्त्र हैं। जीवात्मा राग-द्वेष की इन मजबूत रस्सियों द्वारा ही इस संसार से बँधा हुआ है।

संसार में कहीं भी जाओ, तुम राग-द्वेष को जरूर पाओगे। एवरेस्ट की चोटी पर भी तुम इन दो वृत्तियों को पाओगे, क्योंकि मनुष्य जहाँ भी जाता है, अपनी इच्छाओं को साथ ले जाता है। राग और द्वेष का खेल तुम तत्त्वों, पेड़-पौधों, जीव-जन्तुओं, यहाँ तक कि ग्रहों-नक्षत्रों के बीच भी पाओगे। सूर्य और शनि के बीच द्वेष है। सूर्य और मंगल के बीच गहन आकर्षण है। शनि और शुक्र के बीच प्रबल सहानुभूति है। दोनों अपने स्वामी सूर्य के प्रतिकूल हैं।

सजातीय वस्तुएँ एक-दूसरे को अपनी ओर आकृष्ट करती हैं। एक गायक दूसरे गायकों से, एक कवि दूसरे कवियों से, एक चिकित्सक दूसरे चिकित्सकों से, एक धूर्त दूसरे धूर्तों से, एक राजनेता दूसरे राजनेताओं से और एक सन्त दूसरे सन्तों से स्वतः जा मिलता है।

राग-द्वेष का स्वरूप

राग-द्वेष, इच्छाओं और तीनों गुणों में गहरा आपसी सम्बन्ध है। राग-द्वेष स्वयं अपरिष्कृत इच्छाएँ हैं, जो रजस् और तमस् के संस्कारों से उत्पन्न होती

हैं। इच्छाएँ, संस्कार, गुण तथा राग-द्वेष – यह सब माया का इन्द्रजाल है। एक ही चीज विभिन्न आकृतियों में प्रकट होती है, वह गिरगिट की भाँति अपना रंग बदलती है। आकर्षण इच्छा बनती है, इच्छा एक संस्कार बनती है और संस्कार मन में जाकर एक गुण बन जाता है। यह खेल बड़ा रहस्यमय है। माया के क्रिया-कलापों को जानना-समझना प्रायः असम्भव है। केवल प्रभु, जो प्रत्येक प्राणी के हृदय में अन्तर्यामी हैं, अपनी माया के इस रहस्यमय खेल को जानते हैं।

जहाँ कहीं भी सुख है, वहाँ तुम्हें राग मिलेगा। जहाँ कहीं दुःख है, वहाँ तुम घृणा और द्वेष पाओगे। तुम मिठाई या आम इसलिए पसन्द करते हो कि उनसे तुम सुख प्राप्त करते हो। अतः तुम्हें उनसे लगाव हो जाता है। तुम बिच्छू से घृणा करते हो क्योंकि वह तुम्हें कष्ट देता है।

क्रोध द्वेष का पुराना मित्र है। जहाँ कहीं द्वेष है, वहाँ तुम्हें क्रोध भी मिलेगा। इसी तरह राग का लंगोटिया यार है भय। जहाँ कहीं भी राग है, वहाँ तुम भय को अवश्य पाओगे। मनुष्य अपनी सम्पत्ति खोने से डरता है, क्योंकि वह उससे गहन रूप से जुड़ा है।

राग-द्वेष ही वास्तविक कर्म हैं। संसार पेड़-पौधों, नदी-पर्वतों या द्वीप-समुद्रों से नहीं बनता। राग-द्वेष ही वास्तविक संसार है। जिसमें न राग है न द्वेष, ऐसे मनीषी के लिए संसार का अस्तित्व ही नहीं।

राग-द्वेष के हाथों में तुम मात्र एक कठपुतली हो। मन राग-द्वेष द्वारा कटी लीक पर ही भागता है। जैसे ही तुम सबेरे बिस्तर से उठते हो, ये दोनों

वृत्तियाँ अपना खेल आरम्भ कर देती हैं। तुम चाय पीते हो, अपना सूट-बूट पहनते हो और खाने, पीने, काम पर जाने के क्रिया-कलापों को करना आरम्भ कर देते हो। राग के कारण ही तुम किसी पुरुष या स्त्री की ओर आकृष्ट होते हो और उसका पक्ष लेते हो। द्वेष के कारण तुम किसी पुरुष या स्त्री से घृणा करते हो और उसको कष्ट पहुँचाते हो। इस प्रकार सांसारिक प्रपंच चलता रहता है।

राग-द्वेष के कारण ही तुम पुण्य और पाप कर्म करते हो। शुभ कर्मों के फलस्वरूप सुख भोगते हो और अशुभ कर्मों से दुःख। तुम जन्म और मृत्यु के चक्कर में फँस जाते हो। राग-द्वेष, पुण्य-पाप, सुख-दुःख से बना यह चक्र अनन्त काल से घूम रहा है। केवल एक योगी या सन्त ही इस चक्र को ध्यान और उपासना द्वारा थाम सकता है। जो आत्म-विश्लेषण, स्वाध्याय और ध्यान का अभ्यास करते हैं, वे इन दोनों वृत्तियों से ऊपर उठकर शाश्वत आनन्द एवं अमरत्व प्राप्त करते हैं।

राग-द्वेष रूपी वृक्ष की जड़ें बड़ी गहरी हैं। इसकी शाखाएँ-प्रशाखाएँ सभी दिशाओं में फैली हैं। मन सांसारिक विषयों से दृढ़तापूर्वक चिपकता है। तुम्हारा किसी भी पुरुष या स्त्री, बिल्ली या कुत्ते, जूते या कपड़े, घर या नगर से अनुराग हो सकता है। यदि तुम्हें किसी के प्रति अनुराग है, तो प्रायः तुम्हारे परिवार के सभी सदस्य भी उस व्यक्ति को पसन्द करते हैं। लेकिन यदि तुम उसी व्यक्ति को किसी कारणवश नापसन्द करने लगते हो, तो तुम्हारे परिवार के सभी सदस्य भी बिना किसी कारण उसे नापसन्द करेंगे। परिवार के सदस्यों में, विभिन्न वंशों, सम्प्रदायों, पन्थों, धर्मों और राष्ट्रों में घृणा इसी तरह उपजती है।

राग और द्वेष आध्यात्मिक पथ पर अवरोध हैं। इन दोनों वृत्तियों को अपने पर हावी मत होने दो। राजयोगियों की प्रतिपक्ष भावना की विधि द्वारा इन्हें कुचल डालो। साधना द्वारा धीरे-धीरे अनासक्ति और सार्वभौम प्रेम विकसित होता है, जिससे ये दोनों वृत्तियाँ क्षीण होती जाती हैं। अनासक्ति राग को तथा वैश्विक प्रेम द्वेष को कुचल डालते हैं। अब ये दोनों वृत्तियाँ कोई उत्पात नहीं कर सकतीं। यदा-कदा जब साधक मनमोहक वस्तुओं के सम्पर्क में आता है तब वे अपना सिर उठा सकती हैं, लेकिन उन्हें विवेक और विचार की तलवार से दबा दिया जाता है। एक जीवनमुक्त में तो निर्विकल्प समाधि द्वारा राग और द्वेष पूर्ण रूप से भस्म हो जाते हैं।

बन्धन की जंजीर

अहं का भाव आंतरिक शत्रुओं की सेना का सेनापति है। राग-द्वेष, घमण्ड, क्रोध तथा दम्भ उसके वफादार सैनिक हैं। यदि तुम सेनापति को मार देते हो तो सभी सैनिक अपने आप हथियार डाल देंगे।

अज्ञान से अविवेक उत्पन्न होता है। अविवेक से अहंभाव जन्म लेता है। अहंभाव से राग-द्वेष उत्पन्न होते हैं। राग-द्वेष से कर्म आता है, कर्म से देह और देह से क्लेश आता है। यही सात कड़ियों वाली बन्धन की जंजीर है।

यदि तुम्हें क्लेश नहीं चाहिए, तो देह धारण मत करो। यदि तुम्हें देह नहीं चाहिए, तो कर्म-संचय मत करो। यदि तुम्हें कर्म संचित नहीं करना, तो राग-द्वेष त्यागो। यदि तुम्हें राग-द्वेष त्यागना है, तो अहंभाव को त्यागो। यदि तुम्हें अहंभाव को त्यागना है, तो अविवेक को छोड़ो। यदि तुम अविवेक को त्यागना चाहते हो, तो अज्ञान को समाप्त करो। हे बन्धु! यदि तुम्हें अज्ञान नहीं चाहिए, तो आत्मज्ञान प्राप्त करो।

भगवान करे तुम राग और द्वेष से मुक्त बनो, जो तुम्हारी शान्ति, श्रद्धा और ज्ञान के वास्तविक शत्रु हैं। ज्ञान की तलवार द्वारा इन शत्रुओं का विनाश करो और इसी जीवन में एक जीवनमुक्त होकर प्रकाशमय बनो!

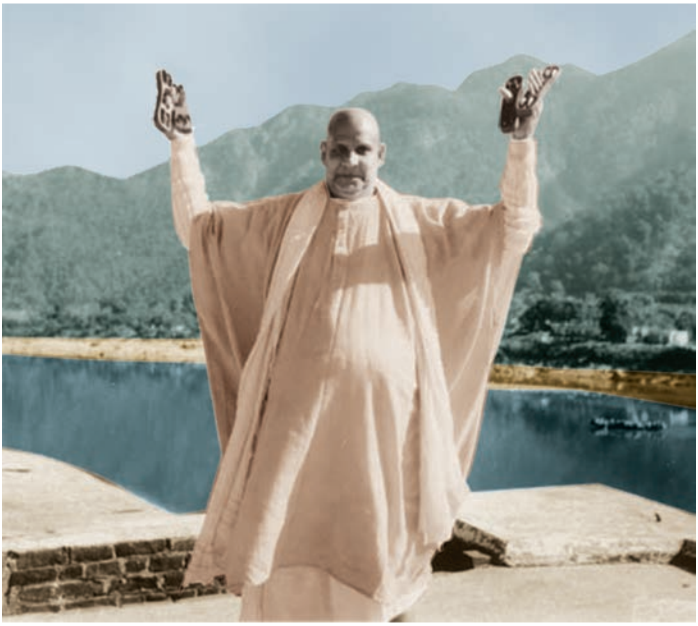

बच्चों के लिए सन्देश

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बच्चों! क्या तुम जानते हो नीतिशास्त्र क्या है? नीतिशास्त्र सदाचार का शास्त्र है। सदाचार यह बतलाता है कि मनुष्य को परस्पर दूसरे प्राणियों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए। इस शास्त्र में वे क्रमबद्ध सिद्धान्त दिये गये हैं जिन पर मनुष्य को चलना चाहिए। नीतिशास्त्र न हो तो मनुष्य इस संसार में अथवा अध्यात्म-मार्ग में कुछ भी प्रगति नहीं कर सकता। जो व्यक्ति शुद्ध नैतिक जीवन बिताता है, वही शाश्वत शान्ति पाता है। नीतिशास्त्र के अनुसार व्यवहार करने से तुम अपने पड़ोसियों, परिवार के लोगों, मित्रों और अन्य सभी लोगों के संग मेल-मिलाप के साथ रह सकोगे।

ऐसा काम कभी नहीं करना चाहिए जिससे दूसरों का भला न होता हो या जिसके लिए बाद में पछताना या लज्जित होना पड़े। इसके बजाय ऐसे काम करने चाहिए जिनके लिए आगे चल कर सब लोग तुम्हारी प्रशंसा करें। यही सदाचार कहलाता है। सत्य बोलना, अहिंसा का आचरण करना, दूसरों को मन, वाणी अथवा कर्म से कष्ट न देना, किसी के प्रति क्रोध न प्रकट करना, दूसरों की निन्दा अथवा बुराई न करना और सबमें ईश्वर का दर्शन करना सदाचार है।

मनुष्य में जितने सद्गुण होते हैं, उन सबको मिलाकर चरित्र कहते हैं। चरित्र से ही मनुष्य शक्तिशाली और तेजस्वी होता है। लोग कहते हैं कि 'ज्ञान ही शक्ति है' पर मैं पूरे जोर के साथ कहता हूँ कि 'चरित्र ही शक्ति है।' चरित्र के बिना ज्ञानार्जन असम्भव है। चरित्रहीन व्यक्ति इस संसार में मृतप्राय है। समाज उसे तिरस्कार और उपेक्षा की दृष्टि से देखता है। यदि तुम अपने जीवन में सफल होना चाहते हो, दूसरों को प्रभावित करना चाहते हो, सांसारिक और आध्यात्मिक मार्ग में प्रगति करना चाहते हो तो तुम्हारा चरित्र निष्कलंक होना चाहिए। शंकराचार्य, बुद्ध, ईसा और प्राचीन ऋषियों को आज भी याद किया जाता है क्योंकि उनका चरित्र दिव्य और अद्भुत था। वे लोग अपने चरित्रबल से ही दूसरों को प्रभावित और उनके हृदय को परिवर्तित कर सके। चरित्र जीवन का स्तम्भ है। मनुष्य के नित्य जीवन का व्यवहार ही उसके चरित्र को प्रकट करता है।

चरित्र महान् आत्मशक्ति है। वह उस सुन्दर फूल के समान है जो चारों ओर अपनी सुगन्ध फैलाता है। कोई प्रतिभाशाली कलाकार, कुशल संगीतकार, योग्य कवि या महान् वैज्ञानिक हो सकता है, लेकिन यदि उसका चरित्र शुद्ध नहीं है तो समाज में उसे समुचित स्थान और सम्मान नहीं मिलेगा। लोग उसको दुतकारेंगे। चरित्रवान् व्यक्ति को दयालु, कृपालु, सत्यनिष्ठ, क्षमाशील और सहिष्णु होना चाहिए। जो व्यक्ति जान-बूझ कर असत्य बोलता है, दूसरों की भावना को चोट पहुँचाता है, उसे दुश्चरित्र कहते हैं। हर एक को इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि उसका चरित्र शुद्ध और निष्कलंक हो।

शुद्ध और निष्कलंक चरित्र वाले व्यक्ति के लक्षण क्या हैं? चरित्रवान् व्यक्ति में जो गुण होने चाहिए, वे असंख्य हैं, फिर भी कुछ खास-खास गुण बताता हूँ – नम्रता, निर्भयता, दानशीलता, मन-वाणी-कर्म से अहिंसा-पालन, दृढ़ इच्छाशक्ति, शालीनता, आत्मनिग्रह, अक्रोध, निरहंकार, शुचिता और प्राणीमात्र के प्रति करुणा।

दया का अपना पुरस्कार होता है

बच्चों, एक जमाना था जब मनुष्य भी पशुओं की तरह खरीदे और बेचे जाते थे। अमीर लोग उन्हें नौकर की तरह नहीं, गुलाम की तरह रखते थे। वे यदि मालिक की इच्छा के विरुद्ध कुछ भी करते थे तो उनके साथ बड़ा बुरा व्यवहार किया जाता था। उनके मामूली अपराध से ही मालिक का क्रोध भड़क जाता था। उन्हें जीवन-भर गुलामी करनी पड़ती थी। अमीर लोग उन्हें खरीदते थे ओर उन्हें निजी सम्पत्ति मानते थे। वे यदि भाग जाते तो उन्हें खोजकर पकड़ा जाता था और कठोर दण्ड दिया जाता था। बड़ी लज्जा की बात है कि बेगुनाह गुलामों के साथ ऐसा दुर्व्यवहार किया जाता था।

प्राचीन रोम में ऐसा ही एक गुलाम था जिसका मालिक उसके साथ बहुत बुरा बर्ताव करता था। गुलाम का नाम था एंड्रोक्लीस। मामूली अपराध के लिए भी मालिक चाबुक से उसकी पिटाई करता। उसे आधा पेट भूखा रखता। इन कष्टों से गुलाम बहुत तंग आ गया और एक दिन जंगल की ओर भाग गया। जंगल में पौधों के झुरमुट में उसने किसी की कराह सुनी। वह उस ओर गया तो वहाँ एक शेर को कराहते हुए देखा। शेर अपना एक पंजा उठाकर दिखा रहा था। उस पंजे में एक मोटा काँटा चुभा था। गुलाम उसके पास गया और उसने वह काँटा निकाल दिया, फिर कपड़े के टुकड़े से पट्टी बाँध दी। शेर को आराम

मिला। वह एंड्रोक्लीस के पैरों पर लोट गया। फिर पूँछ हिलाते हुए कुत्ते की तरह उसका हाथ चाटने लगा। वे दोनों मित्र बन गये और एक ही गुफा में रहने लगे।

कुछ महीने बाद मालिक ने उस गुलाम को पकड़ लिया और उसे राजा के पास ले गया। राजा ने आदेश दिया कि गुलाम को भूखे शेर के सामने फेंक दिया जाय। इसके लिए एक दिन निश्चित किया गया। शेर और गुलाम एंड्रोक्लीस की लड़ाई देखने के लिए हजारों लोग इकट्ठा हुए। बेचारे गुलाम को एक पिंजरे में बन्द कर दिया गया और उसी में शेर को छोड़ दिया गया। शेर जोर से गरजा और गुलाम की ओर लपका। लेकिन गुलाम के समीप जाते ही उसने अपने पुराने दोस्त को पहचान लिया। शेर फौरन उसके पैरों पर गिर पड़ा और पूँछ हिलाते हुए उसका हाथ चाटने लगा। यह आश्चर्य देख कर राजा और प्रजा सब चकित रह गये। राजा ने गुलाम को पास बुलाया। गुलाम ने शेर के साथ अपनी मित्रता की सारी कहानी कह सुनायी। पूरी कथा सुनकर राजा बहुत खुश हुआ और गुलाम तथा शेर दोनों को आजाद कर दिया।

प्यारे बच्चों, एंड्रोक्लीस शेर के पास जाने का साहस कैसे कर सका? शेर पीड़ा से कराह रहा था और अपना पंजा उठाकर दिखा रहा था। एंड्रोक्लीस ने पंजे में चुभे काँटे को स्पष्ट देख लिया। उसे देखकर गुलाम का हृदय पसीज गया। इसलिए गुलाम साहसपूर्वक शेर के पास गया और उसने उसका पंजा अपने हाथ में लेकर काँटा निकाल दिया। शेर को आराम मिला और कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए उसने पूँछ हिलाना शुरू कर दिया।

पशु भी बड़े भावुक होते हैं। उनके साथ जैसा व्यवहार किया जाता है वे भी वैसा ही व्यवहार करते हैं। बच्चों, क्या तुमने अल्पाइन रेड-क्रॉस कुत्तों के

बारे में सुना है? स्विट्ज़रलैण्ड के आल्प्स पर्वत में जो लोग बर्फ में खो जाते हैं, उनकी तलाश करने तथा उनकी रक्षा करने की शिक्षा वहाँ के सेंट बर्नार्ड कुत्तों को दी जाती है। रेड-क्रॉस कुत्ते लड़ाइयों में एम्बुलेन्स टोली की मदद करते हैं। प्रत्येक रेड-क्रॉस कुत्ते के गले में छोटी थैली बँधी होती है जिसमें मरहम-पट्टी करने का सामान होता है और ब्राण्डी की छोटी बोतल भी रहती है। कुत्ते को जब कोई ऐसा घायल व्यक्ति दिखायी देता है, जो स्वयं अपना थोड़ा-बहुत उपचार कर सकता हो तो कुत्ता उसके पास जा कर तब तक खड़ा रहता है जब तक वह अपने घाव पर पट्टी नहीं बाँध लेता। यदि वह व्यक्ति इतना अधिक घायल होता है कि स्वयं कुछ भी नहीं कर पाता तो कुत्ता उसके पास खड़ा होकर भौंकने लगता है। उसका भौंकना सुनकर स्ट्रेचर से ढोने वाले लोग आ जाते हैं और उस व्यक्ति को उठाकर युद्ध के मैदान से बाहर प्राथमिक उपचारगृह में ले जाते हैं। कितने आश्चर्य की बात है कि कुत्ते भी ऐसा मानवीय कार्य करते हैं!

बच्चों, दया का अपना पुरस्कार होता है। दया और सद्भाव से किया गया छोटा-सा भी काम हमारे हृदय को शुद्ध करता है और ईश्वरीय-चेतना को अधिकाधिक जाग्रत करता है।

शिवानन्द दिग्विजय

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

स्वामी सत्यानन्दजी अपने गुरु स्वामी शिवानन्दजी की चिरस्मरणीय अखिल भारतीय दिग्विजय यात्रा के प्रत्यक्ष साक्षी और अभिन्न सहभागी रहे हैं। यह अंश उनके द्वारा प्रणीत 'शिवानन्द दिग्विजय' से उद्धृत है।

भारतीय संस्कृति की परम्परा को बनाए रखने का श्रेय हमारे देश के उन संत-महापुरुषों को है, जिन्होंने समयानुकूल इस स्वर्णभूमि में जन्म लिया। इन विश्वप्रिय महात्माओं ने जिस प्रकार भूमण्डल को एक नया तथा सुगम पथ बतलाया, उसी आदर्श की आधारशिला पर स्वामी शिवानन्दजी के जीवन प्रासाद का निर्माण हुआ। इन्हीं महर्षियों के पदचिह्नों का अनुसरण कर स्वामीजी ने भारतीय संस्कृति और भारतीय योग सम्पत्ति का सुरक्षण किया और अभ्युदय की विशाल चेतना भरी है।

शिवानन्द दिग्विजय हमारे इस गौरवशाली इतिहास का एक और पवित्र अध्याय है। 9 सितम्बर सन् 1950 को उत्तरापथ के महान् तपस्वी ने दिग्पर्यटन के लिए प्रस्थान किया। इस दिन उन्होंने कहा, 'हमारा कर्तव्य मानवता को गहन निद्रा से जाग्रत करना है। मनुष्य को मनुष्य के कर्तव्यों का ज्ञान कराना है। भगवद्-भजन तथा नाम-संकीर्तन की मोक्षदायिनी नामावली जन-जन की भावुकता में जगानी है। भारत को जनकल्याण के नेतृत्व के लिए तैयार करना है। दिव्य जीवन का संस्थापन कर, सत्य सनातन धर्म को चिरंजीव बनाना है।'

स्वामीजी ने इकसठ दिनों तक निरन्तर भारत और लंका में अपनी अमर गीता का शंख प्रतिध्वनित किया, अपनी विजय-वैजयन्ती लहरायी और कोटिशः व्यक्तियों को परम पुनीत आत्मज्ञान में दीक्षित किया। श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के इस कार्य से समग्र देश में जागृति का प्रभात उद्यत हुआ और ज्ञान के चन्द्र-दिवाकर जागे।

भारत की चेतना के उदयकाल में स्वामीजी का यह दिग्पर्यटन नवीन इतिहास का प्रथम अध्याय था, जिसने पवित्र मंगलाचरण से इतिहास का श्रीगणेश किया और रामनाम की आनन्ददायिनी वाणी से उसकी प्रतिष्ठा की। कोटिशः व्यक्तियों ने उनके गीत सुने और उनकी गीता भी। उन्होंने धर्म के

सभी अंगों को शक्ति प्रदान की, उसकी कट्टरता को धोया, उसके प्रति जनता के अज्ञान की निवृत्ति की और ज्ञान का आलोक विकिरित किया।

हे दिग्विजयी!
तुम्हारे गीतों में गीता है मेरी,
जिसको मैं गाता हूँ अब...
क्योंकि यही आदेश तुम्हारा था।
तुम ही हो प्रेरणा मेरी,
भव्य जिसे कहता हूँ मैं और अमर...
गीतों के देव! चित्रों के सौन्दर्य सनातन!
तुम्हारी दिग्विजय को गाना,
अनन्त की गोद में चिरन्तन नींद सोना है,
और है जीवन का चमत्कार।
उत्तरापथ के हे अमर तपस्वी!
कूटस्थ अचल, अवतार महान्!
तुम्हारी ज्योति जलती रहे; प्रेरणा फलती रहे,
मेरी तूलिका अमर रहे और लेखनी अप्रतिहत –
मैं लिखते रहूँ औ' लिखते ही रहूँ।

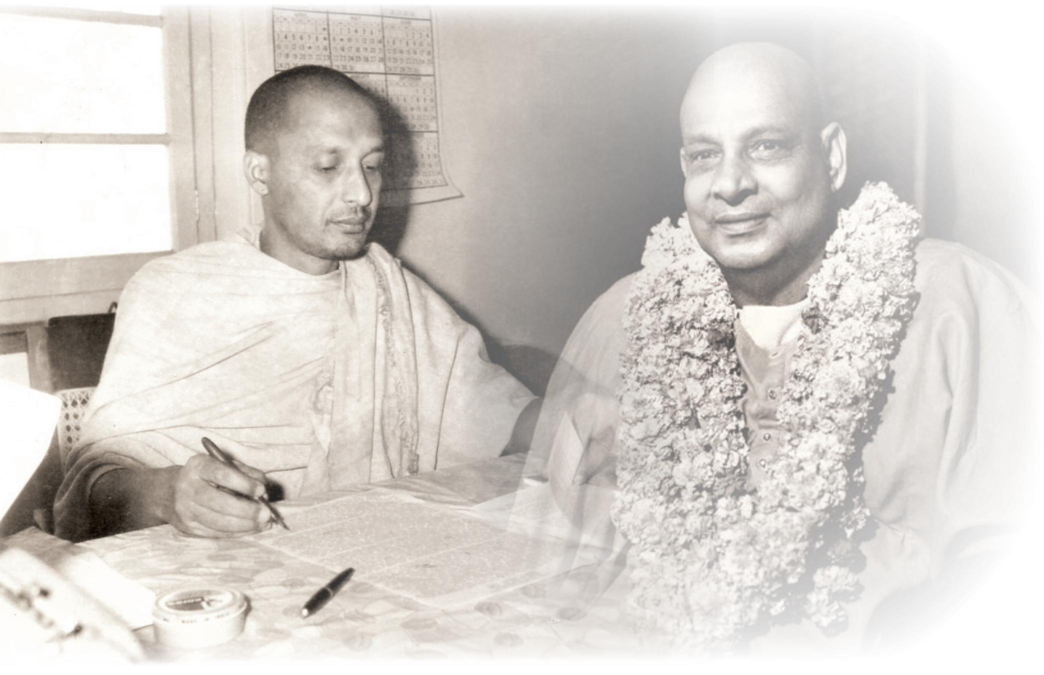

कल्पतरु की छाँव में

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

गीता का उपदेश युद्ध के मैदान में क्यों दिया गया?

भगवान ने किसी विशेष कारण से ही युद्धक्षेत्र में गीता का उपदेश दिया था। वे हमको बतलाना चाहते थे कि ज्ञान व्यावहारिक होना चाहिए, आराम कुर्सी पर टिका हुआ नहीं। यदि किसी व्यक्ति का ज्ञान उसके साथ युद्धक्षेत्र तक नहीं जा सकता तो फिर उस ज्ञान का क्या प्रयोजन! कोई भी व्यक्ति भोजन के बाद आराम कुर्सी पर बैठकर दर्शन पर ढेरों बातें कर सकता है, योग शास्त्र के सूक्ष्म बिन्दुओं की घण्टों विवेचना कर सकता है। लेकिन यह वास्तविक ज्ञान नहीं, मात्र एक ढोंग है। यह आत्म-ज्ञान नहीं, उसके चारों ओर रचा गया शब्द-जाल मात्र है। ऐसे व्यक्ति अक्सर परीक्षा की घड़ी में बुरी तरह विफल हो जाते हैं। जब उनके विवेक और बुद्धि की परख व्यावहारिकता के ठोस धरातल पर होती है तब उनका सारा ज्ञान धरा रह जाता है।

श्रीकृष्ण का पांचजन्य शंख उच्च स्वर में यही उद्घोष करता है कि ऐसा किताबी ज्ञान सच्चा ज्ञान नहीं। वास्तविक बुद्धिमानी या समझदारी उसी ज्ञान में है जो संकट की बेला में भी तुम्हारा साथ दे, सही राह दिखाये और तुम्हें इतना सामर्थ्य दे कि तुम सभी बाधाओं पर विजय प्राप्त कर सको। सच्चे ज्ञान द्वारा तुम परीक्षा की घड़ी को एक ऐसे स्वर्णिम अवसर में परिवर्तित कर सकोगे, जिसमें तुम्हारी अंतर्निहित प्रतिभा जागृत होकर सर्वत्र प्रकाशित होगी।

दृढ़ निश्चय वाले मनुष्य किसी भी परीक्षा या प्रलोभन के सामने हार नहीं मानते। उनकी प्रतिभा संकट के समय ही सामने आती है। कमजोर मनोबल वाला व्यक्ति अनुकूल वातावरण में बहुत बड़ी-बड़ी बातें करता है, परन्तु परिस्थिति के प्रतिकूल होते ही वह घबरा जाता है, उसका ज्ञान खत्म हो जाता है, उसकी बुद्धि कुंठित हो जाती है। जबकि एक दृढ़ संकल्प वाला व्यक्ति सामान्य परिस्थिति में अपने मनोबल का भले ही कोई संकेत न दे, लेकिन परीक्षा की घड़ी में वह आश्चर्यजनक रूप से क्रियाशील होकर अपने सुदृढ़ सन्तुलित चरित्र का परिचय देता है।

श्रीकृष्ण द्वारा अपने उपदेश के लिए एक भयानक युद्धक्षेत्र जैसा मंच चुना जाना साधकों को यही सीख देता है। एक तरह से यह युद्धभूमि समत्व योग

के उस महान् संदेश के लिए उपयुक्त पृष्ठभूमि थी, जिसे वे अर्जुन के माध्यम से समस्त मानवता को देने जा रहे थे।

मैं पिछले तीन वर्षों से आध्यात्मिक अभ्यास कर रहा हूँ, परन्तु मुझे अपने अन्दर विकास के कोई लक्षण नहीं दिखलाई देते। ऐसा क्यों?

विकास तो अवश्य हुआ है। तुम्हारी धारणा शक्ति अब पहले से ज्यादा स्थिर और दृढ़ है। लेकिन एक बात याद रखो, आध्यात्मिक जगत् में विकास मापने का कोई पैमाना नहीं होता। तुम्हारी आध्यात्मिक उन्नति मापने के लिए कोई बैरोमीटर या थर्मामीटर जैसा यंत्र नहीं है। तुम अभी अपना आधा मन ही ईश्वर को दे रहे हो। अपनी अस्त-व्यस्त और बिखरी मानसिक किरणों को एकत्र करो और अपना पूरा-का-पूरा मन ईश्वर को अर्पित कर दो। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि तुम उसे तत्क्षण अनुभव कर लोगे।

चित्त की एकाग्रशक्ति को कैसे बढ़ाया जा सकता है?

अपनी आवश्यकताओं और कामनाओं को कम करना, प्रतिदिन दो घंटे मौन का अभ्यास करना, प्रतिदिन एक से दो घंटे एकांत में बिताना, प्राणायाम का अभ्यास, प्रार्थना, ध्यान का अभ्यास और विचार जैसी युक्तियों से एकाग्रशक्ति को बढ़ाया जा सकता है।

अलग-अलग सिद्ध पुरुष और साधु-महात्मा प्रायः परस्पर विरोधी उपदेश क्यों देते हैं?

सिद्ध पुरुषों का जन्म समय-समय पर विपत्तियों का नाश करने और धर्म की स्थापना के लिए होता है। वे देश, काल, परिस्थिति और आवश्यकता के अनुसार उपदेश देते हैं। भगवान बुद्ध ने कहा था, 'मारो मत! अहिंसा का पालन करो' जबकि गुरु गोविन्द सिंह ने कहा था 'मारो!'। जब भगवान बुद्ध पैदा हुये थे तब उस समय लोग बहुत-से निर्दोष जानवरों की बलि चढ़ाया करते थे। उन्होंने इस बलि प्रथा को रोकने के लिए ही अहिंसा का उपदेश दिया। जबकि गुरु गोविन्द सिंह का लक्ष्य लोगों में साहस और वीरता का संचार कर, उन्हें अन्याय और अत्याचार का मुकाबला करने के लिए प्रेरित करना था। किसी महात्मा ने कहा, 'सब कुछ त्यागकर जंगल में चले जाओ' जबकि श्री रामानुज ने कहा, 'घर में ही अनासक्त भाव के साथ मस्त होकर रहो, भगवान

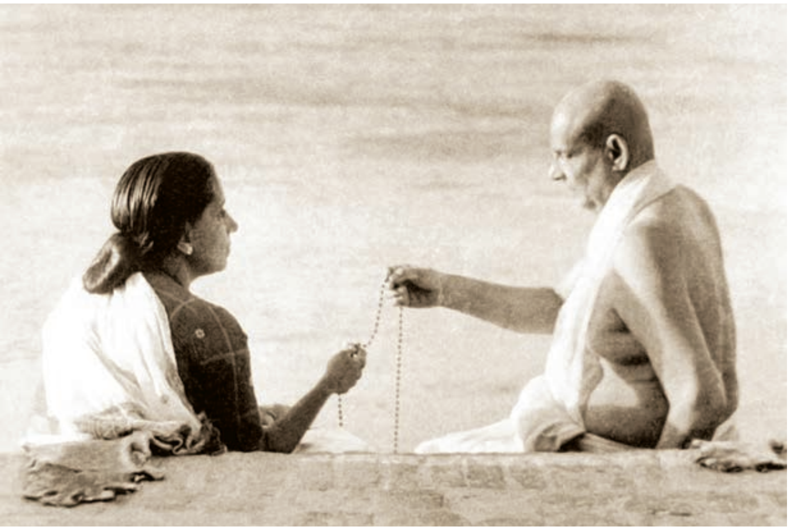

विष्णु की आराधना करो।' वास्तव में इस तरह के उपदेश विरोधाभासी नहीं हैं। ये समय की माँग के अनुसार हैं। ये उस समय के मानव के आचरण और स्वभाव के अनुसार होते हैं।

क्या आत्म-साक्षात्कार के लिए निष्काम कर्मयोग आवश्यक है? यदि ऐसा है तो वह किस प्रकार किया जाए?

हाँ, यह सही है। यदि तुम निष्काम कर्मयोग से जी चुराते हो तो तुम वेदान्त के सार को कभी आत्मसात् नहीं कर पाओगे। निष्काम कर्मयोग से तुम्हें चित्त-शुद्धि प्राप्त होगी जो अन्ततः तुम्हें आत्म-साक्षात्कार तक पहुँचा देगी।

प्रेम के साथ हर किसी की सेवा करो। बगैर किसी फल की आशा के, बगैर कर्त्तापन के भाव के। अपने आप को प्रभु का एक निमित्त मात्र समझो। गरीबों और बीमारों की नारायण भाव से सेवा करो। किसी भी स्थान, व्यक्ति या वस्तु से लगाव मत रखो। सफलता-विफलता, हानि-लाभ, सुख-दुःख – सभी परिस्थितियों में अपने मानसिक संतुलन को हमेशा बनाये रखो। सभी क्रिया-कलापों के बीच मन को आत्मा पर केन्द्रित रखो। तभी तुम एक सच्चे कर्मयोगी बनोगे। सही भाव और दृष्टिकोण से किया गया कर्म उत्थान की ओर ले जाता है। यदि व्यक्ति तुम्हारी हँसी उड़ायें, तुम्हें मारें-पीटें, तब भी तटस्थ बने रहो, अपनी साधना को जारी रखो।

मौन के क्या-क्या लाभ हैं?

दिन में जब भी समय मिले, एक-दो घण्टे मौन का अभ्यास जरूर करना चाहिए। बाकी समय में भी कम बोलने की कोशिश करो। बेकार की बात-चीत को टालो। न तो कठोर शब्द बोलो, न ही अश्लील भाषा का प्रयोग करो। मीठी और मधुर वाणी बोलो। तुम्हें अपनी वाणी पर पूर्ण नियंत्रण होना चाहिए। वाणी के नियंत्रण का सीधा सम्बन्ध मन के नियंत्रण से है। वाक्-इन्द्रिय मन को बहुत उत्तेजित और उद्विग्न कर देती है। इसके विपरीत मौन तुम्हें शांति प्रदान करता है। यह मन से तनावों, चिंताओं और झगड़ों को हटाता है। यह तुम्हारी संकल्पशक्ति को दृढ़ और मजबूत बनाता है। विचारों के प्रवाह में कमी लाकर यह ऊर्जा का संरक्षण करता है।

समस्याएँ और चिन्ताएँ मुझे हर तरफ से घेरे हुए हैं, हर तरफ मुझे असफलता और कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है, घरेलू दायित्व मेरी साधना में बाधा डालते हैं। हे नाथ! मैं क्या करूँ?

बिल्कुल मत डरो। 'आखिर यह भी गुजर जाएगा' – इस कहावत को हमेशा याद रखो। इसे बड़े-बड़े अक्षरों में लिखकर उस कागज को अपने कमरे की दिवार पर चिपका दो। मुश्किलें और मुसीबतें आगमापाय हैं, वे आती हैं और चली भी जाती हैं। भगवद् गीता के इस श्लोक को हमेशा दिल में धारण करके रखो –

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः।
आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत॥2.14॥

'हे कुन्तीपुत्र! सर्दी-गर्मी और सुख-दुःख को देने वाले इन्द्रिय और विषयों के संयोग तो आने-जाने वाले और अनित्य हैं। इसलिए हे भारत! उनको तुम सहन करो।'

साहसी और धैर्यवान् बनो। चट्टान की तरह अडिग खड़े रहो। सत्य में निवास करो। ॐ तुम्हारा आधार और सम्बल बने। तब कोई भी वस्तु तुम्हें हिला नहीं पाएगी। बल्कि कठिनाइयाँ तुम्हें और मजबूत और सहनशील बनाएँगीं। प्रभु की लीला रहस्यमयी है। मन-ही-मन कहो, 'भगवान! जैसी आपकी इच्छा' और अपने आपको उनके प्रति पूरी तरह समर्पित कर दो।

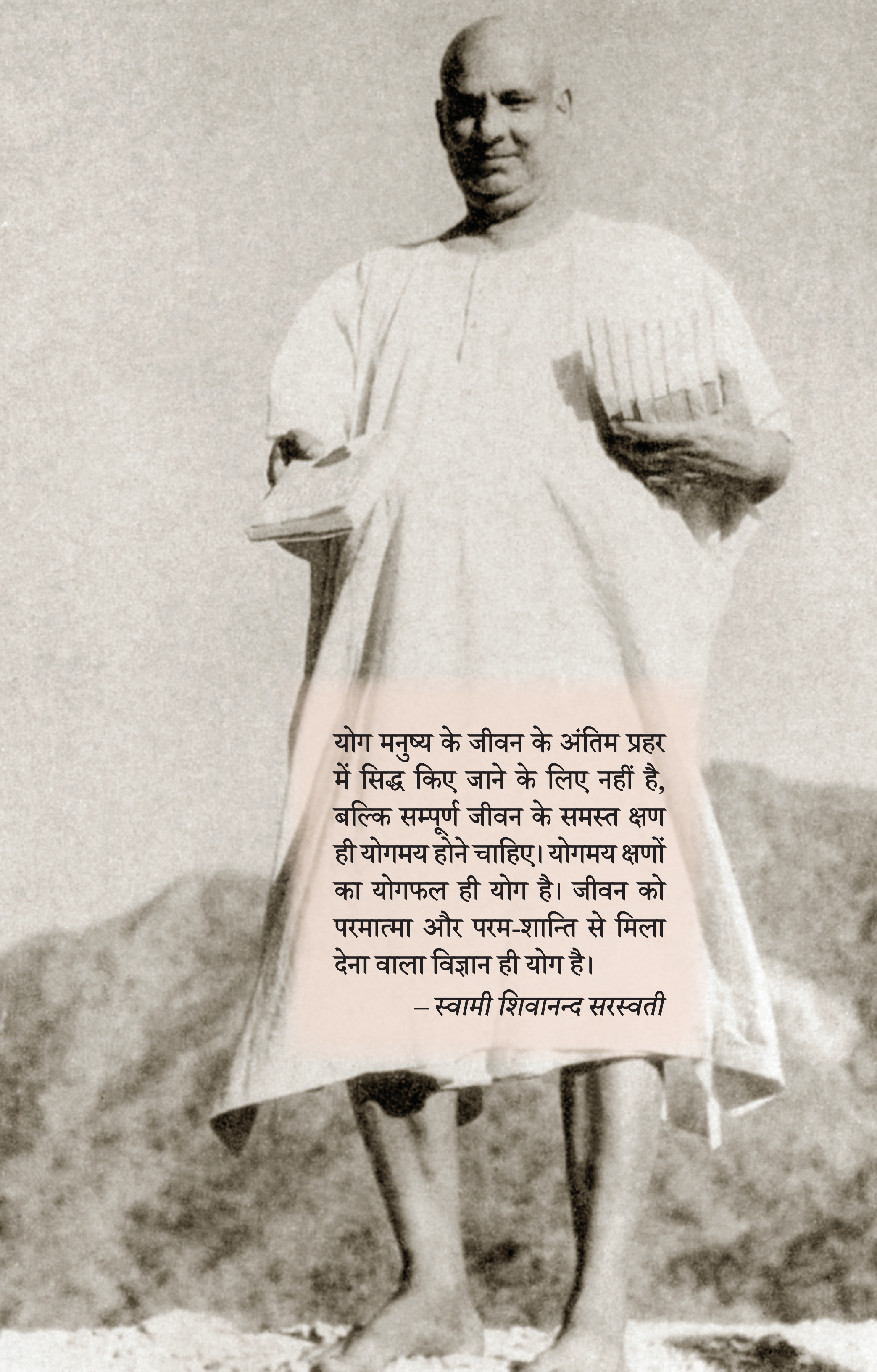

योग मनुष्य के जीवन के अंतिम प्रहर में सिद्ध किए जाने के लिए नहीं है, बल्कि सम्पूर्ण जीवन के समस्त क्षण ही योगमय होने चाहिए। योगमय क्षणों का योगफल ही योग है। जीवन को परमात्मा और परम-शान्ति से मिला देना वाला विज्ञान ही योग है।

– स्वामी शिवानन्द सरस्वती

दान सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सूचना

आश्रम के लिए दान राशि केवल निम्नलिखित श्रेणियों के अन्तर्गत स्वीकार की जाएगी –

1. **सामान्य दान**
   जो बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन को दिया जा सकता है और जिसका उपयोग यौगिक गतिविधियों के विकास एवं संवर्द्धन के लिए किया जाएगा।

2. **मूलधन निधि के लिए दान**
   बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन की मूलधन निधि के लिए। **मूलधन निधि** से प्राप्त ब्याज राशि का उपयोग संस्था/न्यास की सभी गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

3. **सी.एस.आर. दान**
   जिसका उपयोग सी.एस.आर. गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

इसलिए भक्तों से निवेदन है कि वे केवल उपर्युक्त श्रेणियों के अन्तर्गत अपनी दान राशि भेजें।

बिहार स्कूल ऑफ योग को दान 'SB Collect Online Donation Facility' के माध्यम से निम्नलिखित वेबसाइट द्वारा सीधे दिया जा सकता है – **https://www.onlinesbi.sbi/sbicollect/icollecthome.htm?corpID=2277965**

आप चेक, डी.डी. अथवा ई.एम.ओ. द्वारा भी दान दे सकते हैं जो **बिहार स्कूल ऑफ योग**, **बिहार योग भारती**, **योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट** या **योग रिसर्च फाउण्डेशन** के नाम से हो और मुंगेर में देय हो।

दान राशि के साथ एक पत्र संलग्न रहे जिसमें आपके दान का प्रयोजन, डाक पता, फोन नम्बर, ई-मेल और PAN नम्बर स्पष्ट हों।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

योग – अथ द्वितीयोऽध्यायः

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

पृष्ठ 31, ISBN: 978-93-84753-41-2

सन् 2013 में मुंगेर में आयोजित विश्व योग सम्मेलन में स्वामी निरंजनानन्द जी ने घोषित किया था – योग-प्रचार का प्रथम अध्याय पूरा हो गया है, अब योग का द्वितीय अध्याय प्रारम्भ होना है, जिसका लक्ष्य निष्ठा, गम्भीरता और प्रतिबद्धता के साथ योग का बेहतर प्रयोग होगा। स्वामीजी अब हमारे लिए ऐसा मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं जहाँ योग हमारी जीवनशैली बनकर समाज में सकारात्मकता और सृजनात्मकता की संस्कृति ला सके। इस यात्रा पर चलने के लिए स्वामीजी सभी को आमंत्रित करते हैं।

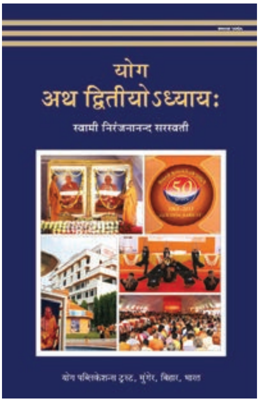

उपलब्ध

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें –

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
दूरभाष : 9162783904, 9835892831

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा

वेबसाइट और एप्प

www.biharyoga.net

बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर बिहार योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद

बिहार योग परम्परा के समस्त ऑडियो, वीडियो तथा पुस्तक प्रकाशन प्रसाद रूप में *satyamyogaprasad.net* वेबसाइट पर तथा *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में प्रस्तुत हैं।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन

www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/

योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए) एवं कार्यक्रम

- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, ए.पी.एम.बी. अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है
- *Bihar Yoga* एप्प साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है
- *For Frontline Heroes* एप्प कोरोनावायरस के विरुद्ध अभियान में संघर्षरत कार्यकर्ताओं के लिए सरल योग अभ्यास प्रस्तुत करता है जो महामारी से उत्पन्न तनाव को सम्हालने में सहायक हैं
- स्वस्थ जीवन हेतु *biharyoga.net* तथा *satyamyogaprasad.net* पर *यौगिक जीवनशैली साधना* का कार्यक्रम उपलब्ध है

• Registered with the Registrar of Newspapers, India
Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

योगपीठ कार्यक्रम एवं योग विद्या प्रशिक्षण 2024

बिहार योग विद्यालय योगविद्या प्रशिक्षण

फरवरी 11–जुलाई 11	*योग चक्र अनुभव*
जुलाई 2022–जुलाई 2024	*आश्रम जीवन प्रशिक्षण*
जुलाई 18–जनवरी 18 2025	*योग चक्र अनुभव*
सितम्बर 22–30	*हठ योग एवं कर्म योग प्रशिक्षण*
सितम्बर 24–30	*हठ योग यात्रा 5*
अक्टूबर 3–12	*राज योग एवं भक्ति योग प्रशिक्षण*
अक्टूबर 6–12	*राज योग यात्रा 5*
अक्टूबर 17–30	*प्रगतिशील योग विद्या प्रशिक्षण*
नवम्बर 3–10	*क्रिया योग एवं ज्ञान योग प्रशिक्षण*

बिहार योग भारती योगविद्या प्रशिक्षण

अगस्त 7–अक्टूबर 7	*द्विमासिक यौगिक अध्ययन (हिन्दी)*

कार्यक्रम

नवम्बर 17–23	*मुंगेर योग संगोष्ठी*

मासिक कार्यक्रम

प्रत्येक शनिवार	*महामृत्युंजय हवन*
प्रत्येक एकादशी	*भगवद् गीता पाठ*
प्रत्येक पूर्णिमा	*सुन्दरकाण्ड पाठ*
प्रत्येक 4, 5 एवं 6 तारीख	*गुरु भक्ति योग*
प्रत्येक 12 तारीख	*अखण्ड रामचरितमानस पाठ*